जातिवादी कौन : ?

एक विश्लेषण

लेखक : एक दृष्टा

प्रकाशन विभाग

जातिवादी कौन ?

एक विश्लेषण

लेखक : एक दृष्टा

दि किसान ट्रस्ट, दिल्ली
12, तुगलक रोड,
नई दिल्ली-११००११

प्रकाशन विभाग
किसान ट्रस्ट दिल्ली,
12, तुगलक रोड, नई दिल्ली-११००११

प्रथम संस्करण : १६८२

द्वितीय संस्करण : नवम्बर 1982

© दि किसान ट्रस्ट दिल्ली

मूल्य : रु० 2.00

दि किसान ट्रस्ट दिल्ली की ओर से श्री अजयसिंह द्वारा प्रकाशित एवं

एस. पी. प्रिन्टर्स इ—120, सेक्टर-7,

नौएडा से मुद्रित

फोन : 271662. 371459

प्राक्कथन

किसान ट्रस्ट, दिल्ली, जिसकी स्थापना १६७६ में हुई थी, ने अपना कार्य अलग-अलग भाषाओं—हिंदी, उर्दू तथा अंग्रेजी में तीन साप्ताहिक समाचार-पत्रों के प्रकाशन से आरम्भ किया था। किसान ट्रस्ट का मुख्य उद्देश्य देश की ग्रामीण जनता को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में शिक्षित करना है। इसी उद्देश्य को पूर्ण करने की दिशा में किसान ट्रस्ट ने कुछ समय पहले अपना एक प्रकाशन विभाग आरम्भ किया था।

इस विभाग ने आरम्भ में प्रयोग रूप में एक छोटी पुस्तिका प्रकाशित की थी। इस पुस्तिका में १८ जून, १६८० को घटित "माया त्यागी कांड" का विस्तृत ब्यौरा दिया गया है। अब, जब कि प्रकाशन विभाग विकसित हो गया है, इस विभाग ने दो पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य अपने हाथों में लिया है। प्रथम पुस्तक "जातिवादी कौन ? एक विश्लेषण", नाम से अंग्रेजी में है, तथा दूसरी पुस्तक पहली का अनुवाद है, जो कि आपके हाथों में है।

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की लोकप्रियता का अन्दाजा इसी से लगाया जा सकता है कि थोड़े समय बाद ही इसका दूसरा संशोधित संस्करण आपके हाथों में है।

इस पुस्तक में लेखक ने हमारे समाज की एक ऐसी दुर्दमनीय समस्या—'जातिवाद' को विषय बनाया है, जिसने हमारे समाज को अव्यवस्थित कर दिया है तथा निर्दयी अन्याय को जन्म दिया है। दुख की बात तो यह है कि उक्त समस्या आज भी समाज में व्याप्त है तथा घटने की बजाय बढ़ रही है। लेखक ने, स्वतंत्रता प्राप्ति से अब तक के राजनैतिक व्यक्तित्वों को, इस समस्या के संदर्भ में तोलने का प्रयास किया है तथा यह निश्चित करने की कोशिश की है कि इस समस्या की बढ़ोत्तरी के लिए कौन जिम्मेदार है। इस पुस्तक में लेखक ने काफी अप्रकाशित तथ्यों को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

हम आशा करते हैं कि यह पुस्तक आपको इस सामाजिक बुराई की प्रकृति के विषय में काफी जानकारी दे सकेगी। यदि यह सम्भव हो सका तो, हम समझेंगे कि किसान ट्रस्ट ने अपने उद्देश्य की पूर्ति की दिशा में एक नया कदम बढ़ाया है।

अजय सिंह
मैनेजिंग ट्रस्टी
दि किसान ट्रस्ट, दिल्ली

जातिवादी कौन ?
एक विश्लेषण

चौधरी चरणसिंह जातिवादी हैं, इस प्रकार का आरोप उनके राजनैतिक विरोधी, यहां-वहां उन पर लगाते रहते हैं। देखना यह है कि सत्य क्या है ?

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से आरम्भिक पांच वर्षों को छोड़ देने पर अप्रैल १९४६ में तेरह सदस्यों में से श्री चरणसिंह को उत्तर प्रदेश सरकार के मंत्रिमंडल में संसदीय सचिव बनाया गया। सर्वोत्तम कार्यकुशल एवं जनप्रिय होने के बाद भी जनवरी, १९५१ में मंत्री पद पर पदोन्नति पाने वाले श्री चरणसिंह, अपने मंत्रिमंडल के अन्तिम व्यक्ति थे। अब हम सीधे, दिसम्बर, १९६० के घटनाक्रम पर आते हैं, जब तत्कालीन मुख्य मंत्री डा० सम्पूर्णानन्द (जिन्होंने पंडित गोविंद वल्लभ पन्त के दिल्ली स्थानान्तरण के कारण, दिसम्बर १९५४ में पद-भार सम्भाला था) को अपने पद से त्याग पत्र देना पड़ा।

श्री सी० बी० गुप्ता और श्री चरणसिंह के बीच उस समय उत्तराधिकारी का चयन किया जाना था और यह कोई बड़ा मुश्किल काम भी नहीं था, वास्तव में इन दोनों के मध्य मुकाबले का कोई मुद्दा भी नहीं था, क्योंकि चरणसिंह की योग्यता, सक्षमता, जनप्रियता तथा निष्ठा का लोहा सभी ओर माना जाता था।

यहां पर इस बात का मौका नहीं है कि हम उनकी नीतियों, उन समस्त विभागों एवं जन सेवाओं, जिनके आप प्रमुख रहे, उनके अन्तर्गत क्या-क्या प्रशासनिक एवं लोकहित के मौलिक कार्य किये, उनकी चर्चा करें। हम तो उनके व्यक्तित्व के कुछ मौलिक गुणों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहेगें, जिनके कारण तेरह वर्षों के समय में ही (सन् १९४६ से १९५९) कुशल प्रशासक, जागरूक जनप्रिय नेता की छवि किस प्रकार जन-जन के अन्तरमन में स्थान पाकर मुखरित होने लगी।

भ्रष्टाचार के बढ़ते गहरे घने बादल सार्वजनिक जीवन में छाते जा रहे हैं, ऐसे समय में एक संकल्पशील, अथक योद्धा, जिसके निजी जीवन पर दूर-दूर तक एक छोटा सा दाग भी न हो, जिसका जीवन एक खुली किताब हो, उसके पास रहने वाले ही नहीं, प्रिय व्यक्तियों, रिश्तेदारों आदि किसी को भी लेकर सार्वजनिक जीवन में कभी कोई एक उंगली तक न उठी हो, की आवश्यकता है। श्री चरणसिंह के सार्वजनिक जीवन, प्रशासन और नेतृत्व में उक्त सभी गुण विद्यमान रहे हैं।

इसी ने ग्राम ग्रादमी पर गहरी छाप छोड़ी ग्रौर जब इन गुणों की चर्चा भारत में राजनैतिक जीवन जी रहे लोगों को लेकर की जाती है तो दूर-दूर तक एक तरफ ग्रनेकों लोग ग्रौर दूसरी तरफ ग्रकेले श्री चरणसिंह सार्वजनिक जीवन जीते हुए एक बेदाग व्यक्ति नजर ग्राते हैं। यही कारण है कि "जन गण मन ग्रधिनायक" के साक्षात्कार इस चरित्र के सामने श्रद्धा से तन-मन झुक जाता है।

"श्री चरणसिंह में लोगों को एक परिश्रमी, जोखिम उठाने वाले, समस्त विपरीत परिस्थितियों में निर्भीकता से खड़े एक संकल्पशील योद्धा की स्पष्ट छवि नजर ग्रायी। कर्म, कर्म ग्रौर कर्म ही श्री चरणसिंह का नारा रहा है। उसका ग्रन्दाजा केवल इस बात से ही लगाया जा सकता है कि ग्रापने उत्तर प्रदेश के मंत्री पद पर रहते हुए ग्रन्य मंत्रियों के मुकाबले में सर्वाधिक दौरे एवं ग्राम सभायें, ग्रपने राज्य के दूरस्थ किनारों में जा जाकर की, लेकिन इतने लम्बे समय तक मंत्री रहते हुए भी ग्रापको इतना समय नहीं मिला कि ग्रपने ही राज्य के दर्शनीय स्थलों जैसे—बद्रीनाथ इत्यादि ग्रौर पड़ौस के चंडीगढ़ तक भी जा सकें। इन्हीं सब कारणों के चलते वह, एक ग्राम ग्रादमी की नज़र में "एक सच्चे कर्मयोगी" साबित हुए।

श्री चरणसिंह शायद देश के उन सौभाग्यशाली मंत्रियों में से ग्रकेले ही होंगे जिन्हें प्रत्येक विधान सभा सत्र में विरोधियों की ग्रोर से भी, कभी इस मुद्दे पर कभी उस नीति पर, हमेशा चाटुकार प्रशस्ति नहीं, वरन स्पष्ट रूप से ग्रनुमोदन प्राप्त होता रहा। विधानसभा सत्र की कार्यवाहियों को यदि उठाकर देखा जाए तो स्पष्ट मालूम पड़ जायेगा कि विरोधी दल के सदस्यों ने चरणसिंह के वक्तव्यों का समय समाप्त होने पर ग्रनेकों बार मांग उठाई कि सत्र का समय ग्रौर बढ़ाया जाये, जिससे श्री चरणसिंह ग्रपने विचारों को पूरी तरह से रख सकें ग्रौर उनके ज्ञान एवं जानकारियों से वे पूर्णरूपेण लाभान्वित हो सकें।

श्री चरणसिंह ने हमेशा इस बात पर बल दिया कि मंत्रीगण तड़क-भड़क एवं दिखावे से बच कर रहें, ताकि उनके एवं सड़क के ग्रन्तिम ग्रादमी के बीच खाई कम से कम हो सके। इस प्रकार सड़क के ग्रन्तिम ग्रादमी की मुक्ति का संकल्प लिये, इस कर्मयोगी के ग्राह्वान पर ही उत्तर प्रदेश में मंत्रियों का वेतन घटाकर १००० रु० प्रतिमास किया गया, मंत्रियों ने बड़ी गाड़ी "शेवरलेट" के स्थान पर छोटी कार "एम्बेसडर" का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया, मंत्रियों की गाडियों एवं निवास स्थल पर लगातार राष्ट्रीय ध्वज को फहराये जाने की परम्परा बन्द की गयी, एक पूरी पी० ए० सी० की स्कवायड मंत्री की रेल यात्रा के समय चलती थी, उसे भी बन्द किया गया। यह सब इतनी ग्रासानी से लागू नहीं हो गया, इसके लिये श्री चरणसिंह को जून १९५४ की मंत्रिमंडलीय ग्रनौपचारिक बैठक में वरिष्ठ

मंत्रियों से गरमागरम बहस एव एक वरिष्ठ मंत्री द्वारा इसी के बाबत दिये गये वक्तव्य के विरोध में बैठक का बहिष्कार तक करना पड़ा था। चरणसिंह ने मंत्री पद को हमेशा जन सेवा का साधन माना है स्वयं में साध्य नहीं।

श्री चरणसिंह एक ऐसे स्तम्भ का नाम रहा है जो कभी भी, किसी भी हालत में नीतियों पर समझौता नहीं करता, इसीलिए उनकी जेब में हमेशा इस्तीफा तैयार रहा। यही कारण रहा कि जब भी कोई ऐसा कार्य जिससे आपके आत्म-सम्मान को थोड़ी-सी भी ठेस पहुंची या सार्वजनिक हितों के विरुद्ध होता हुआ आपने देखा, आपने इसके विरुद्ध सशक्त आवाज़ ही नहीं उठाई, सुनवाई न होने पर आपने इस्तीफा दे दिया, या विरोध स्वरूप पदमुक्त किये जाने की बात स्पष्ट लिख कर भेज दी। इस प्रकार की लगभग एक दर्जन से अधिक घटनायें हैं जो देश एवं प्रदेश के लोगों को, यहां तक कि गाँव की चौपाल तक को मौखिक रूप से याद हैं और एक लम्बी चर्चा का विषय रही हैं।

उपरोक्त घटनाक्रम या गुणों के कारण राजनैतिक विरोधी भी इच्छा या अनिच्छा से चरणसिंह का लोहा हमेशा से मानते रहे हैं। श्री पाल आर० ब्रास, जो कि वाशिंगटन यूनिवर्सिटी में राजनीतिशास्त्र के प्रोफेसर हैं, अपनी पुस्तक "भारत के एक राज्य में प्रभाजित राजनीति : उत्तर प्रदेश में कांग्रेस दल"(बम्बई : आक्स-फोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, यूनिवर्सिटी आफ केलिफोर्निया प्रेस, १९६६) में, चौधरी चरणसिंह पर एकमात्र आरोप ही लगा पाये हैं कि वह "अपनी प्रकृति से स्वाभिमानी तथा दूसरों के साथ रिश्तों में गैर-समझौतावादी रहे हैं। यहां पर उपरोक्त पुस्तक में से कुछ अंश नीचे दिये जा रहे हैं जिससे पूरी बात श्री ब्रास के ही शब्दों में समझ में आ सके।

"...चौधरी साहब—यह आदरपूर्ण सम्बोधन है, जो उनके अनुयायियों द्वारा उपयोग किया जाता है। वह असमान्य रूप से उत्तर प्रदेश की राजनीति के एक गुट के सफल नेता रहे हैं। चरणसिंह को प्रेरणा देने में सत्ता का मोह तो कम ही रहा है सर्वाधिक प्रेरणा मिली है उनके अजेय विचारों, नीतियों एवं कार्यक्रमों की सच्चाई के कारण। चरणसिंह इन्हीं कारणों से न तो मित्रता प्राप्त कर पाते हैं और न ही समर्थन, और अपने विरोधियों को कुछ भी नहीं दे पाते हैं।"

(पृ० १३९)

"चरणसिंह वास्तविक रूप में राजनैतिक बुद्धिजीवी तो नहीं हैं, लेकिन वह बहुत काफी पढ़े-लिखे व्यक्ति हैं। अपनी इस तीक्ष्ण योग्यता को उन्होंने उत्तर प्रदेश की कृषि समस्याओं के सतत् अध्ययन में लगाया है। उत्तर प्रदेश में चरणसिंह

कृषक हितों में अग्रणी चिन्तक एवं एक छत्र नेता हैं। उत्तर प्रदेश जमींदारी समाप्ति समिति के प्रमुखों में से होते हुए आपने इस बात का निश्चित अथक प्रयास किया कि इस कानून में कोई ऐसा छोटा-सा रास्ता भी न रह जाये जिसके कारण जमींदारों का वर्चस्व समाप्त होने से रह जाए, तथा राज्य की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जागीरदाराना हस्तक्षेप फिर कहीं से भी सिर न उठा पाये।" (पृष्ठ १३९-१४०)

"श्री चरणसिंह में भारतीय जन समूह के एक आदर्श नेता के काफी विशिष्ट गुण हैं। वह अपनी बौद्धिक विशिष्टताओं, गुणों, ईमानदारी और सत्यनिष्ठा के लिए बहुचर्चित रहे हैं। अभी तक उन पर अपने स्वयं के लिए कुछ भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त करने का कोई आरोप नहीं लगा है। इनकी एक दल के नेता के रूप में प्रमुख आलोचना जिस बात को लेकर होती है, वह है प्रकृति से स्वाभिमानी एवं दूसरों से सम्बन्धों के बीच गैर-समझौतावादी होना। (पृष्ठ १४१)

"बहुत से गुटीय नेता राजनीतिज्ञों से तालमेल बनाकर चलते हैं और अपने समर्थकों एवं सहयोगियों की सहायतार्थ आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। वैसे तो इस प्रणाली में परिवर्तन होता रहता है। मेरठ जिले में श्री चरणसिंह—एक अत्यन्त सफल दलीय नेता हैं—अपनी प्रतिष्ठा को कुछ इस प्रकार विकसित किया है कि वह अनुपातिक रूप में असमंजनशील, गैर-समझौतावादी सी बन गयी है। यह नहीं है कि चरणसिंह समस्याओं को सुनेंगे ही नहीं या भौतिक लाभ अपने समर्थकों को नहीं पहुंचायेंगे, किंतु वह यह अवश्य चाहेंगे कि उनके हस्तक्षेप के पीछे तार्किक एवं उपयुक्त कारण होना चाहिए। श्री चरणसिंह अनुपातिक तौर पर इस अर्थ में भी गैर-समझौतावादी या असमंजनशीलहो सकते हैं कि वे अपने समर्थकों के लिये निष्ठाशील हैं और वह अपने लिये कुछ नहीं चाहते और इससे ही अपने पर निर्भर रहने वालों को वे कुछ नहीं बांट सकते। (पृष्ठ २३७)

"प्रो० ब्रास आगे कहते हैं, जैसा कि उनको किसी मित्र ने पत्र में लिखा था कि चरणसिंह अपने खास लोगों का उस ढंग से ध्यान नहीं रखते जितना उनको रखना चाहिये।"

"प्रो० ब्रास ने श्री चरणसिंह के निजी चरित्र एवं उन गुणों के बारे में भी लिखा है जिन विशिष्टताओं और गुणों के चलते ही वह असामान्य तौर पर सफल राजनैतिक नेता बन पाये।"

बाद में श्री सी.बी. गुप्ता को दिसम्बर १९६० में उत्तर प्रदेश के भविष्य

की बागडोर सौंपने के लिये चुना गया। सन् १९५६ व १९६२ के बीच वे दो बार उत्तर प्रदेश विधान सभा के चुनाव हार चुके थे । इस प्रकार ऐसे आदमी को चुना गया जो उत्तर प्रदेश विधान सभा का सदस्य भी नहीं था, इन सबसे हटकर श्रीमान् की न तो कोई प्रतिष्ठा थी और न कार्यकुशलता और न ही ऐसा कोई गुण जो मुख्यमन्त्री पद के लिए आवश्यक हो, सिवाय इसके, वह एक अच्छे दल प्रबन्धक थे। इसी के साथ अनेकों बार श्री नेहरू ने कांग्रेसियों को इस बात से अवगत कराया था और अपनी नाराजगी भी व्यक्त की थी कि श्री सी.बी. गुप्ता की पूंजीपतियों से सांठ-गांठ है ।

१९६३ के कामराज प्लान में श्री सी. बी. गुप्ता का नाम था और वह साफ भी किये जाने वाले थे, नई दिल्ली के कांग्रेसी मालिकों ने एक महिला श्रीमती सुचेता कृपलानी जो कि राज्य से बाहर की थीं, वैसे तो एक अच्छी कांग्रेसी कार्यकर्ता थीं, लेकिन उनको न तो उत्तर प्रदेश की समस्याओं का, वहां की जनता की परेशानियों का पता था और न ही सार्वजनिक प्रशासनिक अनुभव ही था, को सामने लाये ।

१९६७ के आम चुनाव के परिणामों को अगर हम देखें तो कांग्रेसियों की बड़ी हार विधान सभा चुनावों में जो हुई उसका कारण था श्रीमती सुचेता कृपलानी का ढीला-ढाला प्रशासन । केन्द्रीय कांग्रेसी नेतृत्व का ध्यान श्री चरणसिंह की ओर न जाकर सी·बी. गुप्ता की ओर गया। इन तमाम परिस्थितियों में श्री चरणसिंह ने कांग्रेस से इस्तीफा दिया और महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित भारत की समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय क्रान्ति दल (बी०के०डी०) नामक नई राजनैतिक पार्टी बनायी। ८ जनवरी, १९७७ को श्री चरणसिंह ने यह पत्र लिखा जो स्वयं इस बात को सिद्ध करता है कि उनके इस्तीफे का क्या कारण था ।

भारतीय लोक दल

चरणसिंह,
अध्यक्ष

शिविर : उ०प्र० निवास
नई दिल्ली
दिनांक : ८-१-१९७७ ।

प्रिय इन्दिरा जी,

यह पत्र मैंने ३० दिसम्बर को लिखा था, परन्तु इसे आपके पास काफी विलम्ब से, आज ८ जनवरी को भेज रहा हूं क्योंकि यह निश्चित नहीं कि यह पत्र कुछ उपयोगी सिद्ध होगा या नहीं ।

एक समाचार रिपोर्ट में आपका यह भाषण छपा है, जो आपने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा संचालित सामाजिक अध्ययन तथा अनुसंधान की राष्ट्रीय परिषद् द्वारा आयोजित एक प्रशिक्षण शिविर में २३ दिसम्बर को दिया था। उस रिपोर्ट में निम्नलिखित पैराग्राफ थे :—

"कांग्रेस के और विभाजन हुए, उनमें से कुछ "कांग्रेस के मालिकों" के स्वेच्छाधारी रवैये के कारण हुए। प्रायः प्रत्येक राज्य में दल का एक मालिक था।" परन्तु कुछ राज्यों में दल आदर्शवादी कारण से नहीं बल्कि वैयक्तिक विरोध व प्रतिस्पर्धा के कारण बनाए गए। उन्होंने उत्तर प्रदेश में श्री चरणसिंह का उदाहरण दिया, क्योंकि उन्होंने बी.के.डी. (भारतीय क्रान्ति दल) बहुत ही वैयक्तिक कारण को लेकर इसीलिये बनाया ताकि वह उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री बन जायें।"

यह बात बिल्कुल भी सही नही है और मैं यह महसूस करता हूं कि ऐसा कहकर आपने मेरे प्रति निष्पक्ष व अच्छा व्यवहार नहीं किया। वास्तव में, एक बार पहले भी, एक विदेशी संवाददाता के साथ साक्षात्कार के दौरान (इस समय मेरे पास बिल्कुल निश्चित प्रसंग नहीं है) आपने यह बात कही थी कि पश्चिम बंगाल के श्री अजय मुखर्जी को मुझे अन्य बातों में अच्छे और सच्चे व्यक्ति होने के बावजूद भी कांग्रेस इसलिए छुड़वानी पड़ी क्योंकि हमको उन लोगों ने काम नहीं करने दिया, जिनके हाथ में उस समय कांग्रेस का नेतृत्व था। यह पता नहीं कि आप अपने ही बयान की किस बात को वास्तव में सही मानती हैं, अतः ऐसी स्थिति में कुछ घटनाओं के केवल जिक्र से ही यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि मैंने कांग्रेस इसलिए नहीं छोड़ी थी कि मैं मुख्यमन्त्री बनना चाहता था बल्कि इसलिये छोड़ी थी कि उस समय मेरी निष्ठा व विश्वास को धक्का पहुँचाया गया था।

उत्तर प्रदेश मे १९६७ के आम चुनाव में कांग्रेस को केवल १९८ सीटें मिली थीं, जबकि उसके मुकाबले विरोधी दलों के कुल मिलाकर २२७ उम्मीदवार विजयी हुए थे। जब विरोधी दल एक नेता को चुनने के प्रश्न पर एकमत नहीं हो पाए थे तो उन्होंने नेतृत्व का दायित्व सम्भालने के लिये मुझ से कई बार कहा था। मेरे समर्थन से उस समय विरोधी दल के सदस्यों की संख्या २७५ तक पहुंच जाती, परन्तु मैंने उनके प्रस्ताव को मानने से इन्कार कर दिया था और कहा था कि कांग्रेस को छोड़ने की मेरी बिल्कुल इच्छा नहीं है।

कुछ दिन बाद जब कांग्रेस विधायक दल के नेता का चुनाव करने के लिये बैठक हुई तो मैं भी श्री सी.बी. गुप्ता के साथ उम्मीदवार के रूप में खड़ा हुआ।

आपने अपने दो विश्वासपात्र व्यक्तियों सर्वश्री उमाशंकर दीक्षित तथा श्री दिनेशसिंह को लखनऊ इसलिये भेजा था कि वे मुझे श्री सी.बी. गुप्ता के पक्ष में बैठ जाने के लिए समझाएं ताकि श्री गुप्ता निर्विरोध रूप से चुने जा सकें। ऐसा जिन कारणों से किया था वे स्पष्ट थे।

काफी समझाने बुझाने के बाद में मुकाबले से केवल हट ही नहीं गया था, बल्कि मैंने श्री गुप्ता के नाम का प्रस्ताव भी रखा था। उस समय मैंने केवल एक-मात्र शर्त आपसे चुनाव से हटने के साथ जोड़ी थी और कई प्रमुख कांग्रेसियों की उपस्थिति में आपके अपने दूतों ने भी स्वीकार कर ली थी। वह शर्त यह थी कि राज्य मंत्रिमंडल के उन, अनेक सदस्यों में से जिनके प्रति लोगों की अच्छी भावना नहीं थी और जिनकी मेरी राय में अच्छी प्रतिष्ठा नहीं थी, ऐसे दो सदस्यों को हटा दिया जाए और उनके बदले में कम से कम दो नये व्यक्तियों को मंत्रिमंडल में शामिल किया जाए। ८ मार्च को श्री सी.बी. गुप्ता निर्विरोध चुन लिये गये थे। उस उत्तर प्रदेश के जहां से सबसे अधिक संख्या में संसद सदस्य होते हैं, नामित मुख्य मंत्री के रूप में श्री गुप्ता ने ११ या १२ मार्च को आपके और श्री मोरार जी देसाई के बीच समझौता कराया था। १३ मार्च को आपके मंत्रिमंडल ने शपथ ली थी। अगले दिन श्री गुप्ता ने अपने मंत्रिमंडल के सदस्यों के नामों की सूची राज्य-पाल के पास भेजी। सूची में मेरा नाम शामिल था, लेकिन मैंने मंत्रिमंडल में शामिल होने से इन्कार कर दिया था, क्योंकि कोई भी व्यक्ति जैसा कि एक ओर सर्वश्री उमाशंकर दीक्षित और दिनेश सिंह और दूसरी ओर मेरे और आपके बीच केवल एक सप्ताह पहले तय हुआ था उसके अनुसार न कोई नया व्यक्ति शामिल किया गया और न किसी को हटाया गया। श्री गुप्ता ने तर्क दिया था कि वह इस समझौते में शामिल नहीं थे।

श्री दीक्षित ने १७ मार्च को फिर मुझे लखनऊ में मिले और कहा कि वह श्री गुप्ता के साथ इस विषय में बात करके मुझे अवगत करायेगें, लेकिन उन्होंने बाद में मुझे कुछ नहीं बताया। श्री दिनेश सिंह ने टेलीफोन पर मुझसे कहा था कि उनकी बात को माना जाएगा, इसके लिये वह ३१ मार्च को लखनऊ पहुंचेंगे। मैंने उनसे कहा था कि उन्हें इस सम्बन्ध में अवश्य बात कर लेनी चाहिये, क्योंकि इस समय विधान सभा का अधिवेशन चल रहा है और १ अप्रैल को अधिवेशन समाप्त हो जाएगा। परन्तु श्री दीक्षित की तरह श्री सिंह ने भी मुझे कोई पता नहीं दिया।

जब लगभग साढ़े ग्यारह बजे रात को उनसे टेलीफोन पर सम्पर्क किया गया तो उन्होंने मुझे बताया कि वह लखनऊ इसलिये नहीं पहुंचे, क्योंकि दूसरा पक्ष मुझे

बीच में डालना नहीं चाहता था और उन्हीं ने मुझसे कहा "जैसा मैं चाहूं करने के लिये स्वतंत्र हूं। इसके बाद ही मैंने छोड़ने का निश्चय कर लिया था और इसी सम्बन्ध में मैंने विधान सभा के अधिवेशन में अगले दिन घोषणा कर दी थी।

जब आपने अथवा आपके विश्वासपात्रों ने मेरे द्वारा दल छोड़ने के परिणामों को महसूस किया तो नेशनल हैराल्ड (लखनऊ), जिसका प्रबन्ध श्री दीक्षित के हाथ में था, के कर्मचारियों में से एक सज्जन और श्री दिनेश सिंह के जिले प्रतापगढ़ के एक प्रमुख कांग्रेसी इसी शाम को एक-दूसरे के बाद मेरे निवास स्थान पर मुझसे मिलने आए। उन्होंने सुझाव दिया कि मैं मुख्यमंत्री के रूप में कांग्रेस में वापस आ जाऊं। मैंने उत्तर दिया था कि जो कुछ हो चुका है, उसको देखते हुए मैं उनके सुझाव को स्वीकार नहीं कर सकता।

यदि मानव जीवन में सत्य की कोई महिमा है तो श्री उमाशंकर दीक्षित और श्री दिनेश सिंह इस बात को जो मैंने इस मामले में उनकी भूमिका के संबंध में कहीं है, प्रमाणित कर सकते हैं।

पूरी निष्ठा के साथ दिए गए आश्वासन को निभाने में पूरी तरह असफल रहे। कांग्रेस नेतृत्व तथा मेरे बीच वैचारिक मतभेद पहले से ही, विशेष रूप से, जनवरी १९५९ में नागपुर में हुए कांग्रेस अधिवेशन के समय से ही उभर रहे थे। मैंने सहकारी खेती तथा खाद्यान्न के राजकीय व्यापार को शुरू करने के सरकारी प्रस्ताव का घोर विरोध किया था। पंडित नेहरू इससे नाराज हुए थे, जिसके कारण उत्तर प्रदेश की राजनीति के संबंध में उन्होंने कुछ और निर्णय लिये यदि ऐसा न होता तो वैसे ही निर्णय लिये जाते।

अपने विचारों को स्पष्ट करने के लिये मैंने एक पुस्तक लिखी जिसमें मैंने देश की आर्थिक समस्याओं का उल्लेख किया। यह पुस्तक १९६० में प्रकाशित हुई थी। १९६२ में इस पुस्तक का संशोधित संस्करण एक अलग शीर्षक से निकला था। उसकी एक-एक प्रति मैंने आपके (तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष) के पास और पंडित जी के पास भेजी थी। मैंने यह बात कही थी कि बड़े-बड़े संयुक्त फार्मों की अर्थव्यवस्था को सेवा सहकारियों के द्वारा परस्पर जोड़ा जा सकता है, जो हमारी परिस्थितियों के अनुकूल है; और यह कि हमारे रहन-सहन के स्तर में सुधार लाने के लिये गैर कृषि खेती का विकास पहली शर्त है। यह विकास पहले अथवा कम से कम इसके साथ-साथ खेती का विकास किये बिना नहीं हो सकता। कुछ अपवादों को छोड़कर घरेलू तथा छोटे पैमाने के उद्योगों को प्रमुखता दी जानी चाहिये; और यह कि जब तक जनसंख्या की वृद्धि को रोका नहीं जाएगा तब तक आर्थिक सुधार

के हमारे सारे प्रयास निष्फल रहेगें और हमारा देश उस समय तक कोई प्रगति नहीं कर सकेगा, जब तक हमारे सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण आदि में परिवर्तन नहीं होगा। हमारी आर्थिक समस्याओं के संबंध में गांधी जी द्वारा प्रेरित कार्यक्रमों, नीतियों अथवा विचारों को बी. के. डी. के सन् १९६९,७१ तथा १९७४ के घोषणा पत्र में शामिल किया गया है। इस बात का मुझे गर्व है कि हमारे घोषणा पत्र में दिये गये अनेक विचारों को अन्य दलों तथा राजनैतिक नेताओं द्वारा भी अपना लिया गया है।

यहां पर इस बात का उल्लेख कर देना अनुपयुक्त नहीं होगा कि १९४७ से ही मैं कांग्रेस नेतृत्व द्वारा राजनैतिक तथा प्रशासनिक दोनों प्रकार के भ्रष्टाचार को समाप्त करने की असफलता के संबंध में चिन्ता प्रकट करता रहा हूं। इस संबंध में लिखे गये मेरे विभिन्न नोट एवं पत्र हैं, जो इस विषय में मेरी चिन्ता को प्रमाणित करेगें। मेरे प्रयासों को गहुत कम सफलता मिली यही कारण है कि हमारे घोषणा पत्रों तथा नीति संबंधी बयानों में भ्रष्टाचार के उन्मूलन तथा स्वच्छ प्रशासन की आवश्यकता को पहला स्थान प्रदान किया गया है।

क्या उपर्युक्त तथ्यों से यह बात स्पष्ट नहीं हो जाती कि बी० के० डी० का जन्म वैयक्तिक विद्वेष या प्रतिस्पर्धा या "मेरे बहुत ही व्यक्तिगत मामलों" के कारण नही हुआ था, बल्कि "आदर्शवादी कारणों" से हुआ था। यदि मैं कांग्रेस को केवल मुख्य मंत्री बनने के लिये छोड़ता या छोड़ने के लिये तैयार होता तो ऐसा एक महीना पहले, कांग्रेस द्वारा अपनी सरकार बनाने से काफी पहले ही कर सकता था और उस समय मुझे या मेरे समर्थकों को बहुत थोड़ा सा या बिल्कुल भी जोखिम न उठाना पड़ता।

यदि मेरे द्वारा कदम सार्वजनिक हित के लिये न उठते अथवा भारतीय क्रांति दल विचारधारा से पुष्ट न होता और उसे लोगों का समर्थन न मिलता तो ऐसी स्थिति में बी० के० डी० का अस्तित्व ही न रहता जब कि उसके पास विशेष रूप से चुनाव लड़ने के साधन तथा उस प्रकार के दल बदल कराने के तरीके नहीं थे जैसे कि कांग्रेस सन् १९७० से एक संगठित रूप में अपनाती रही है। एक सार्वजनिक व्यक्ति के रूप में मेरे आचरण का मूल्यांकन जैसा कि आप जनता को बताना चाहती है, उस समय तक अधूरा होगा जब तक इसके साथ ही इससे संबधित दूसरे तथ्य को भी ध्यान में न रखा जाए। आपको याद होगा कि आपको ३ जनवरी १९६८ को वाराणसी में "इण्डियन साइन्स कांग्रेस" के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता करनी थी। उस समय संयुक्त समाजवादी दल जो उस समय एक शक्तिशाली संगठन था, की स्थानीय शाखा ने आपका घेराव करके अपने अधिकार में लेने और अभियोग के लिये जनता की अदालत में पेश करने का निश्चय किया था। अपने इस इरादे की

घोषणा उन्होंने एक सार्वजनिक बैठक में और समाचार पत्रों में दिये गये बयानों में की थी। यद्यपि एस० एस० पी० मेरी सरकार की एक घटक इकाई थी और विधान सभा में उसके ४५ सदस्य थे और यद्यपि मैं गैर कांग्रेसी सरकार का प्रमुख था, परन्तु मैंने आपके उस दौरे की व्यवस्था करने में व्यक्तिगत रूचि ली और वाराणसी तक आपके साथ गया। मेरे आदेश से श्री राजनारायण संसद सदस्य को तथा एस० एस० पी० के अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओं तथा विधायकों को जेल में बन्द कर दिया गया था और उस पंडाल में, जहां पर आप साइंस कांग्रेस को सम्बोधित कर रही थीं, पहुंचने की उनकी कोशिशों व आपके विरूद्ध भारी प्रदर्शन को पुलिस द्वारा नाकाम कर दिया गया था, जबकि इसके विपरीत उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष जो वाराणसी के रहने वाले हैं और अब आपकी सरकार के एक सदस्य हैं, में इतना नैतिक साहस नहीं था कि वे प्रेस में बयान देकर अथवा किसी सार्वजनिक जलसे में एस० एस० पी० की निन्दा करते।

इस घटना से एस० एस० पी० बहुत बिगड़ गई थी। मैं शुरू से ही अपने इस आचरण व कार्य का परिणाम जानता था और इसीलिये मैंने विधान सभा का अधिवेशन शुरू होने के एक दिन पहले १७ फरवरी को त्यागपत्र दे दिया था। मैंने वही काम किया, जिसे मैं ठीक समझता था अर्थात् लोकतंत्रात्मक भारत में प्रधान मंत्री के पद के सम्मान व गरिमा की रक्षा करना।

कांग्रेस से त्यागपत्र मुझे उस समय आपके द्वारा सही काम न करने अथवा सही काम कराए जाने में आपकी असफलता के कारण देना पड़ा था। यदि मुख्यमंत्री पद को मैं इतना ऊंचा समझता कि उसकी वजह से मैं उस कांग्रेस से इस्तीफ़ा दे सकता था, जिसके लिये अथवा जिसकी सेवा में मैंने अपना जीवन बिताया था, तो मैं उसे एकदम इतनी लापरवाही से व उतावली में न छोड़ देता, जैसा कि मैंने वास्तव में किया था। इसके विपरीत में येन-केन-प्रकारेण, उससे लिपटा रहता और न ही मैं दो बार पहले उससे त्यागपत्र देता जैसा कि मैंने अगस्त, १९६७ तथा दिसम्बर १९६७ में किया था। जिस समय मैंने देखा कि मेरे साथियों का रवैया सार्वजनिक हित के प्रतिकूल हो रहा है तो मैंने मुख्यमंत्री का पद त्याग दिया।

ऐसे लोग जो ऊंचे राजनैतिक पद को साधन नहीं बल्कि साध्य समझते हैं अथवा उसे हर चीज से ऊपर मानते हैं वे ही दूसरे प्रकार का व्यवहार करते देखे जाते है।

अतः मैं यह कहूंगा कि इन दो पैराग्राफों को जिनके संबंध में मुझे शिकायत है, समाचार पत्रों में बड़ा भारी महत्व दिया गया है। इनमें उस प्रकार का चरित्र

हनन होता है जिसका जिक्र आपने अपने २३ दिसम्बर को ही अशोक मेहता को लिखे पत्र में किया है। जिन लोगों को इन बातों व तथ्यों का पता नहीं हैं वे शायद अनुचित व नाजायज आरोपों से प्रभावित होगें। परन्तु में जानता हूं कि मेरे पास इसका कोई उपाय नहीं रहा, क्योंकि प्रेस से ऐसी आशा नहीं है कि आपके बयानों के खंडन में कोई चीज प्रकाशित करें। मैं यह पत्र आपको केवल रिकार्ड के लिये लिख रहा हूं।

श्रीमती इन्दिरा गांधी
प्रधान मंत्री, भारत सरकार, आपका
नई दिल्ली। ह०—(चरण सिह)

○ उपरोक्त पत्र का कोई उत्तर नहीं दिया गया।

जनता की प्रतिक्रिया का पता इस बात से भी स्पष्ट हो जाता है कि संयुक्त विधायक दल ने श्री सी० बी० गुप्ता के स्थान पर श्री चरण सिंह को चुना। यह उनके द्वारा उठाये गये कदम का दूसरा बड़ा स्पष्ट प्रमाण है कि जनमत किसके साथ था। नगरों और गांवों के दूरस्थ किनारों तक जंगल की आग की तरह उत्साह एवं खुशी की लहर दौड़ गयी। लोगों ने राहत की सांस ली। उनके सीनों से एक बड़ा बोझ उतर गया। यहां वहा चारों ओर लोग उत्साह से नाचने गाने लगे। न जाने कितनी मिठाई बंट गई। इस दिन रिक्शा वालों तक ने उत्साह में बिना किराया लिये रिक्शा चलाये। किसी जगह होली का रंग, गुलाल ने फिजाओं को रंगीन बना दिया, कहीं दिवाली में दिये जले। मस्जिदों और मंदिरों में भी दिये जलाये गये। सुखद भविष्य की कल्पना में प्रार्थना समायें हुई। आजादी प्राप्ति के बाद देश के बटवारे ने दिलों को बुरी तरह झकझोर दिया था उसमें एक बार फिर लोगों को मधुर अनुभूति हुई। इस समय का यह उत्साह मिश्रित-उत्साह नहीं था, यह उत्साह इस बात का था कि भ्रष्टाचार और पाप का जो घड़ा भर रहा था, वह तो टूटा। कौन सी वस्तु टूटी, किस व्यक्ति को कितना फायदा हुआ, सवाल यह नहीं था, सवाल था पाप का घड़ा फूटा; जिसका हक था जो योग्य था, अधिकार उसे मिला।

सवाल तो यह उठता है कि नई दिल्ली में बैठा कांग्रेसी नेतृत्व स्पष्ट वायदों को तोड़कर, मनमर्जी के काम क्यों कर रहा था। इसके पीछे क्या-क्या उद्देश्य थे, कौन-कौन सी साजिश थी।

• • •

श्री चरण सिंह को मान्यता न मिलने के पीछे कई प्रमुख कारण थे, एक तो था सहकारी खेती के बारे में उनके विचार, जिसको लेकर सार्वजनिक रूप से श्री नेहरू अपनी रूष्टता जाहिर भी कर चुके थे। इसी के साथ वह एक देहाती किसान जाति

के हैं। (इनका भला उच्च पदों से क्या मतलब, यह अधिकार तो तथाकथित शहरी एवं उच्च जातियों के लिये ही हो सकता है—?) यह निर्णयात्मक कारण हवाई नहीं है, यह सन् १९५८ में श्री चरण सिंह एवं श्री नेहरू के बीच हुए निम्न पत्रों से स्वयंमेव स्पष्ट हो जाएगा।

प्रिय पंडित जी,

लखनऊ
६ अक्तूबर, १९५८.

यह पत्र मेरी और आपकी नई दिल्ली में मुलाकात के समय आपके द्वारा की गयी टिप्पणी के सन्दर्भ में लिख रहा हूं। आपने कहा था कि मेरठ जिले के कांग्रेस संगठनात्मक मामलों में मेरे द्वारा प्रदर्शित 'जाटपन' को आप पसन्द नहीं करते हैं।

मैं यह नहीं जानता कि आपके दिमाग में क्या था, वास्तविकता तो यह है कि मेरठ जिले में जाट समुदाय के अधिकांश लोग गैर-सम्प्रदायिकता के आधार पर ही वोट देते रहे हैं। इस जिले में तमाम परेशानियों एवं दिक्कतों के रहते हुये और इस समाज में सबसे ज्यादा राजनैतिक रूप से प्रतिष्ठित होने के नाते, मैं, हमेशा जातिवाद का लगातार घोर विरोध करता रहा हूं। शायद आप भी इस बात को मानेगें कि उत्तर प्रदेश के इस पश्चिमी भाग में मेरठ जिला ही कांग्रेस का सबसे ज्यादा मजबूत गढ़ है। इसका श्रेय, यदि आप क्षमा करें, तो मैं यह भी कहूंगा कि मुझे भी है। यद्यपि दूसरी जातियों की तुलना में (शायद चमारों को छोड़कर) जाट सर्वाधिक हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश से उनका प्रतिनिधित्व, विधान सभा एवं राज्य सभा में २२ सदस्यों में से केवल तीन का ही है और इन सारे विधायकों को मेरे सुझाव पर ही कांग्रेस का टिकट दिया गया था। वैश्य, त्यागी एवं ब्राह्मणों को उनकी आनुपातिक शक्ति से परे जाकर, जाट जाति की तुलना में बहुत अधिक प्रतिनिधित्व मिला है। मैं पूरे विश्वास के साथ दावा कर सकता हूं कि पुरे प्रान्त में, किसी बाहुल्य समाज को इतना कम प्रतिनधित्व विधान सभा में नहीं मिला होगा, जितना मेरठ में जाट जाति को मिला है। मेरे सारे सार्वजनिक जीवन में ऐसा कोई भी उदाहरण नहीं है जिससे मेरे ऊपर जाटवाद का आरोप प्रमाणित हो। फिर भी पंडित जी, मैं आपकी और उन तमाम लोगों की नजर में एक जाट किसान के घर में पैदा होकर बड़ा नहीं बन सकता। आखिर क्यों—?

इसका कारण कोई दुर्लभ नहीं है, जब किसी प्रकार से असंयमता, अयोग्यता, परिश्रमहीनता सम्भावित अर्थों में चरित्रहीनता या आलोकप्रियता के आरोप मुझ जैसे व्यक्ति पर नहीं लगाये जा सके, तब सबसे अच्छा तरीका अस्तित्व समाप्त करने का निकाला गया, बदनामी का बिल्ला बिना किसी जांच पड़ताल के चिपका दो।

इस बेमतलब प्रचार से जाटों का नाम बदनाम हुआ। उदाहरणार्थ सन् १९५४-५५ में जब राज्यों के पुनर्गठन की बात चल रही थी, उस समय भी ऐसा ही अनर्गल प्रचार एक विशिष्ट वर्ग द्वारा चलाया गया था कि प्रस्तावित दिल्ली राज्य और कुछ नहीं "जाटिस्तान" होगा। इस मनघडंत झूठे प्रचार का जिसमें लेश मात्र भी सत्य नहीं, कोई खंडन नहीं किया गया। वे अशिक्षित हैं, गाँव में रहते हैं, देश के आर्थिक एवं प्रशासनिक जीवन से, यहां की जनता से उनका कोई रिश्ता नहीं है इन सबके बाद भी वे समाज में अपने को छोटा मानकर चलने को कदापि सहमत नहीं होगें। असरदार ग्रामीण क्षेत्रों में व्यंगात्मक रूप से "जाट" कहे जाने को भी वह स्पष्टत: महसूस करने लगे हैं और अब वे इसे बर्दाश्त नहीं करेगें। यही कारण था कि पजाब जहां ५९% हिन्दू जाट थे, केवल ४० वर्षों के अन्तराल में (१८९१-१९३१) में ही अपने पुराने मत को छोड़, सिख एवं मुसलमान बन गये, ताकि भविष्य में कोई इस प्रकार के व्यवहार से उनकी मान्-हानि न कर सके। इस नैतिक दायित्व को छोड़ने या इस परिवर्तन ने ही पाकिस्तान बनने में प्रमुख भूमिका निभाई थी और अब इन्हीं कारणों से पंजाबी-सूबे की मांग उठ रही है।

जन्म के आधार पर बनी जातीय व्यवस्था, सदियों से राजनैतिक-दासता का एक मात्र प्रबल कारण रही है, और इसी के कारण देश का विभाजन तक हुआ। हमको यह बात आगे समझ में आयेंगी कि हमने इतिहास से कोई सबक नहीं लिया है। देश भर के जन-जीवन के महत्वपूर्ण उच्च पदों पर बैठे हुए लोग आज भी इस कमजोरी को त्याग कर ऊपर नहीं उठ पा रहे हैं।

मैंने अप्रैल, १९५४ में आपको एक पत्र के माध्यम से सुझाव दिया था कि संविधान में इस आशय का संशोधन किया जाये कि राज्य या केन्द्र में भविष्यमें किसी भी नौजवान को "राजपत्रित पद" पर उस समय तक प्रविष्ट नहीं किया जायेगा जब तक उसने अपनी जाति के बाहर किसी अन्य जाति में (या अपनी मातृ भाषा के अलावा किसी अन्य भाषाई से) विवाह किया होने या करने की इच्छा व्यक्त न की हो। लेकिन आप सहमत नहीं हुए।

मैं आशा करता हूं कि जिस वेदना से मैंने यह पत्र लिखा है, उसे दृष्टिगत रखते हुए आप मुझे क्षमा करेंगे। मुझे बडा गहरा दुख इस बात से पहुंचा है, और

अप्रैल गलती से लिखा गया है। वास्तव में यह दिनांक २२ मई है।

मैंने अपनी भावनाओं से पन्त जी को भी सूचित कर दिया है और मुझे उम्मीद है कि उन्होंने आपको इससे अवगत भी करा दिया होगा।

अभिवादन सहित,

आपका ही
ह०—चरण सिंह

श्री जवाहर लाल नेहरू
प्रधान मंत्री, भारत सरकार,
नई दिल्ली।

नं० २४७०—पी० एम० एच०/५८

प्रधान मन्त्री निवास
नई दिल्ली
अक्तूबर १०-१९५८.

प्रिय चरण सिंह,

मुझे आपका ६ अक्तूबर का पत्र प्राप्त हुआ।

मैंने आपसे वार्ता के बीच जब "जाटपन" शब्द का उपयोग किया था तब मैं जाति या उस प्रकार के किसी और संदर्भ के बाबत नहीं सोच रहा था। मेरे दिमाग में गुट हेतु कुछ कड़ेपन के बाबत ही बात थी। गुट में जरूरी नहीं है जाट या कोई भी जातीय ग्रुप हो।

जहां तक जाटों का सम्बन्ध है, मैंने उन्हें हमेशा बहुत पसन्द किया है, और उनमें कई गुणों का प्रशंसक भी रहा हूं। मेरे मस्तिष्क में इस शब्द को लेकर व्यंग का कोई सवाल ही नहीं।

सहभावपूर्ण,

आपका
ह०—जवाहर लाल नेहरू

प्रति,
श्री चरण सिंह,
मंत्री,
उत्तर प्रदेश सरकार,
लखनऊ (उ० प्र०)

मेरठ के जाटों के धर्मनिरपेक्ष तथा जाति-विरोधी दृष्टिकोण के बारे में श्री चरण सिंह के नेहरू के नाम उपरोक्त पत्र के द्वितीय पैरा में कहा गया है। उनको और स्पष्ट करने के लिये एक और उदाहरण दिया जा सकता है, जैसे सन १९५२ के

श्राम चुनावों में, श्री चरण सिंह के चुनाव क्षेत्र छपरौली में तीन और प्रत्याशी भी इनके मुकाबले में थे, उनमें एक जाट एक ब्राह्मण और एक हरिजन थे।

श्री खुशी राम शर्मा कांग्रेस के टिकट पर लोक सभा चुनाव लड़े थे, छपरौली इसी क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। इनके मुकाबले में जो एक मात्र जाट प्रत्याशी, सेवा निवृत्त जिला न्यायाधीश एवं जनता में अच्छी प्रतिष्ठा रखने वाले डा० हुकुम सिंह थे। चुनाव परिणामों से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि उन्हें उतने ही वोट मिले, जितने रघुवीर सिंह शास्त्री श्री चरण सिंह के मुकाबले में खड़े जाट प्रत्याशी को मिले थे, वहीं पर खुशीराम शर्मा को वह समस्त वोट मिले जो अन्य तीन प्रत्याशियों श्री चरण सिंह, ब्राह्मण और हरिजन प्रत्याशियों को विधान सभा के चुनावों में कुल मिलाकर मिले थे। जिसका साफ मतलब है कि जिन जाटों ने श्री चरण सिंह को अपना वोट दिया था, उन्होंने श्री खुशीराम शर्मा को भी अपना वोट दिया। यहाँ पर वोट देने का यह तरीका हमेशा से रहा है। इस क्षेत्र के एक भी ब्राह्मण ने अपना मत जाटों में पैदा हुए—कौन—श्री चरण सिंह को नहीं दिया, जबकि वे १९६७ तक के आम चुनावों में हमेशा कांग्रेस प्रत्याशी के रूप में ही चुनाव लड़े। कोई छोटी सी एक भी घटना चरण सिंह के बारे में नहीं बतलाई जा सकती जिससे यह साबित हो सके कि वह जाटों के पक्ष में या ब्राह्मणों के विरूद्ध रहे हों।

यह जाति ही प्रमुख कारण रही है, जिसके कारण चरण सिंह के बारे में मापदण्ड बदलते रहे हैं।

उत्तर प्रदेश के कांग्रेस के प्रमुख पत्र "नेशनल हैरल्ड", जो स्वयं नेहरू की आवाज था, के सम्पादक श्री चेलापति राव द्वारा २५ दिसम्बर, १९६६ को लिखे गये सम्पादकीय लेख "खेल या जुआ" से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

"अत: राजनीति एक अनिश्चित खेल है। एकग्रस्त व्यस्त घातक कृतघ्न खेल। राजनैतिक भविष्य काफी ढुलमुल है और कई लोगों को इसका शिकार होना पड़ता है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण जो कि उत्तर प्रदेश में कुछ सिंह वर्ग के साथ हुआ है। श्री चरण सिंह में मुख्यमंत्री बनने के लिये कई योग्यतायें हैं, लेकिन कोई भी उनके बारे में विचार नहीं करता चूंकि उनके पास राज्य में राजनैतिक तौर पर अग्रणी जातियों का, जैसे ब्राह्मण, बनिया, कायस्थ व अनुसूचित जातियों का समर्थन नहीं है।"

सम्पादकीय की यह पंक्तियां उत्तर प्रदेश की उस समय की परिस्थितियों के संदर्भ में लिखी गयी थीं, जिन्हें समझने के लिये उस समय के घटनाक्रम पर नजर डालना जरूरी है, जो इस प्रकार है—

फरवरी, १९६६ में श्री चरणसिंह को स्वायत्त शासन विभाग की जिम्मेदारी सौंपी गयी थीं। शायद १९६५ के प्रारम्भ में चूंकि श्री चरणसिंह के पास केवल वन विभाग रह गया था, उसकी क्षतिपूर्ति करने के लिए ऐसा किया गया हो, क्योंकि श्री गेंदासिंह जो कुछ ही दिन पहले पी.एस.पी. छोड़कर कांग्रेस में शामिल हुए थे, उन्हें कृषि विभाग दिया गया था। ज्ञात रहे कि वरिष्ठता की सूची में श्री चरणसिंह बहुत ऊपर थे।

जो समस्याएं, स्वायत्त शासन-विभाग में पिछले कई सालों से बढ़ती जा रही थीं, श्री चरणसिंह ने उनको सुधारने हेतु तुरन्त कदम उठाये। जैसे कि कर्मचारियों के वेतन बढ़ाने की तथा इसी संदर्भ में एक आयोग के गठन की सन् १९५०, से चली आ रही मांग की समस्या को श्री चरणसिंह ने बिना आयोग के गठन के ही सुलझा दिया। उन्होंने स्वायत्त शासन-विभाग की कई इकाईयों को पदोन्नत किया, जो कि कई साल पहले ही हो जाना चाहिए था। इससे कर्मचारियों के मूल वेतन में बढ़ोत्तरी हुई, जिसका प्रभाव अधिकतर विभाग की कई इकाईयों पर पड़ा। राजकीय कर्मचारियों के आन्दोलन के कारण, राजकीय कार्य में जो रुकावट आ गई थी, वह, श्री चरणसिंह के इस कदम से केवल दो महीने (दिसम्बर, १९६६—जनवरी १९६७) में ही सम्पूर्ण हो गया तथा कार्यालयों में सम्पूर्ण कार्य नियमित और अनुशासित रूप से चलने लगा।

• • •

जो लोग श्री चरणसिंह को जानते हैं, वे बता सकते हैं कि श्री चरणसिंह पर जातिवादी होने के आरोप से बढ़कर कोई बात झूठ नहीं हो सकती।

यह जन-जन की जुबान पर है कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था की जन्म पर आधारित बुराई, सदियों से देश की राजनैतिक दासता का कारण रही है और इसी के कारण हाल में देश का बंटवारा तक हुआ। इसलिये तो बिना किसी दो राय के श्री सिंह जातीय व्यवस्था जो जड़ से खत्म करने के लिए कटिबद्ध रहे हैं। परिस्थितियों का दुर्भाग्य तो यह है कि जिनके हाथ में सत्ता है, जो जातीय व्यवस्था की समाप्ति के लिये ठोस कदम उठा सकते है, एक उंगली भी इस व्यवस्था की समाप्ति और बुराई पर नहीं उठाते हैं। वह तो बस श्री चरणसिंह पर घृणित आरोप लगाने का कार्य करते हैं। कारण बहुत स्पष्ट है, कि यह लोग ही इस असंगति को, इस सड़ी गली व्यवस्था को, इसके अप्राकृतिक रूप में ही जीवित रखना चाहते हैं।

श्री चरणसिंह, काफी दिनों पहले अप्रैल, १९३९ में कांग्रेस विधायक दल के समक्ष एक प्रस्ताव लाये थे जिसमें माँग की गई थी कि "जो हिन्दू प्रत्याशी किसी

शैक्षणिक संस्था या लोक सेवा में प्रवेश प्राप्त करे उससे उसकी जाति बाबत कोई जांच न की जाये । हाँ, हरिजन हैं या नहीं, केवल इस बात की जांच करवाई जा सकती है । और यही प्रमुख कारण था कि चरणसिंह के ही बल देने पर सन् १९४८ में उत्तर प्रदेश सरकार ने निर्णय लिया कि भविष्य में राजस्व विभाग के किसी पट्टे या "रिकार्ड" में जाति को दर्ज न किया जाये ।

श्री चरणसिंह ने सन् १९४९ और १९५३ में जाति के भीषण प्रकोप को संयत करने की दिशा में शुरुआत करने के लिये दो सार्थक सुझाव तत्कालीन मुख्य-मन्त्री पं० पन्त जी को शासकीय तौर पर निर्णय करने के लिये दिये थे, जिसमें कहा गया था कि जाति के नाम पर चलने वाली शैक्षणिक संस्थाओं को सहायतार्थ अनुदान नहीं दिया जाना चाहिये क्योंकि हमारी बेटियां और बेटे जो इन शैक्षणिक संस्थाओं में पढ़ते है, धीरे-धीरे जन्म पर आधारित छोटे और बड़े संक्रामक रोग से ग्रसित हो जाते हैं । लेकिन पं० पन्त जी ने इन सुझावों पर कोई उत्साह नहीं दिखाया और तत्कालीन शिक्षा मंत्री डा० सम्पूर्णानन्द जी ने तीव्रता से इसका विरोध किया । लेकिन हाँ, चरणसिंह ने अवश्य मुख्य मन्त्री बनते ही अप्रैल १९६७ में, इसी प्रकार का निर्णय लिया और इस प्रकार एक कदम, जो इस दिशा में असरदार हो सकता था, अन्ततः ले लिया गया ।

इस बाबत जो दो टिप्पणियां पं० पन्त को भेजी गयी थीं, नीचे दी जा रही हैं ।

एच०पी०

अभी कुछ दिन पहले भी उन समस्त शैक्षणिक संस्थाओं को अनुदान राशि रोकने की मांग मैंने उठाई थी, जो किसी जाति के नाम से चल रहे हैं । उदाहरणार्थ, कायस्थ पाठशाला (जो कि इलाहाबाद में है, शायद जाति के आधार पर खोली गयी प्रथम पाठशाला है) वैश्य हाई स्कूल, राजपूत या खत्री कालेज, जाट स्कूल आदि । इसी प्रकार का कदम ऐसे ही उपनामों की संस्थाओं जैसे—डी.ए.वी. के हाई स्कूलों (वह स्वयं ही नाम बदलकर "दयानन्द" रखने की बाबत सोच रहे है) हिन्दू या इस्लामिक कालेजों आदि पर भी लिया जाना चाहिये । राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता की राह में सबसे बड़ा रोड़ा आज जाति ही है । यह एक व्यक्ति की

• आनरेबिल प्रीमियर, उस समय मुख्य मंत्री को कहते थे ।

दृष्टि को संकुचित एवं निष्ठा को खोखला करती है और इसी संकुचित दृष्टि एवं सीमित दृष्टिकोण जो जाति व्यवस्था में पैदा होता है, के ही कारण हमारे लोग पिछले दो हजार दशकों से ऐसे सुगम शिकार बन गये हैं कि जंगल का कोई भी मामूली साहसी शिकारी अपनी किस्मत आंकने यहां सुगमता से आता रहा है।

यह देखकर मुझे बड़ा दुख होता है कि इस कड़वे पाठ से हमारे सर्वोच्च नेताओं, जन सेवकों ने जिनमें से कुछ तो पहले से ही उत्कृष्ट राजनैतिक संस्था, कांग्रेस के उच्च अधिकारी भी हैं, कुछ भी सबक नहीं सीखा है। कल ही, मेरी नजर से अखबार की एक सुर्खी गुजरी जिसके अनुसार अमुक व्यक्ति, जो कि सार्वजनिक जीवन के उच्च पद पर आसीन हैं—अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा के दिल्ली में अगले १-२-३ अक्तूबर को होने जा रहे सम्मेलन की अध्यक्षता करेंगे। राज्य या केन्द्र का नेतृत्व करने वाले, हम प्रमुख लोग अगर जातियों-उपजातियों के संकरे मोह के रास्तों को रोकने या इनसे ऊपर उठाने का कार्य नहीं कर सकते तो निश्चय ही अति धूमिल भविष्य हमारे सम्मुख खड़ा है।

मैं इस बात पर बल दे रहा हूं कि प्रथम कदम इस दिशा में हो—शैक्षणिक संस्थाओं के नाम में परिवर्तन, जहां पर हमारी नयी पीढ़ी प्रारम्भिक शिक्षा सबसे असरदार आयु में प्राप्त करती है। हमारे बच्चे इसी स्थान पर घर के बाद जातीय कीटाणुओं से ग्रसित होकर उसी दिशा में जाने-अन्जाने में सोचने के लिये बाध्य हो जाते हैं। इसके लिये कोई कानून की आवश्यकता नहीं है। केवल विभागीय आदेश से ही कार्य पूर्ण हो जायेगा। हम जैसे ही प्रबन्धकों को अपना निर्णय बतायेंगे वह हमारे कदम उठाने के पहले ही नाम बदल लेंगे। मेरा मत है कि प्रबुद्ध जनता इस बात की इच्छुक है और स्वागत के लिये तैयार बैठी है कि सरकार जातीय दुर्ग तोड़ने के लिये कुछ ठोस कदम उठाये।

मैं जानता हूं कि एच०पी० इस मांग से पहले ही से परिचित हैं। लेकिन वह अपने इधर-उधर फैले अनेकों कार्यों में व्यस्त हैं। इसीलिये मैंने यही उचित समझा कि बल देने के लिये लिखित रूप से उनका ध्यान इस तरफ खींचा जाये।

हस्ता०/
चरणसिंह
३०-९-४९.

सी.एम. (द्वारा एम.ई.)

काफी बड़ी संख्या में शैक्षणिक संस्थायें हैं जिसके सदस्य इनको चला रहे हैं। उन्होंने इन संस्थाओं के नाम जातीय आधार पर रखे हुए हैं, इन्हें राज्य से मान्यता और आर्थिक सहायता भी मिल रही है। यह नाम हमारे भविष्य के राष्ट्र-दीपों के मन-मस्तिष्क को संकुचित बनाते हैं। नये विद्यार्थियों को बलात् प्रतिदिन इस बात की याद दिलायी जाती है कि वह जाति विशेष से सम्बन्धित हैं—एक जाति दूसरी जाति से इन गुणों में अच्छी है या उन गुणों में अच्छी है। और यहीं से उनकी दृष्टि पर सारे जीवन भर के लिए पर्दा पड़ जाता है।

अगर हमारी राजनैतिक दासता के किसी एक कारण को ढूंढ़कर उसे आरोपित किया जाए तो मैं समझता हूं कठोर एवं गहराई तक छुपी जन्म पर आधारित जाति-व्यवस्था ही होगी। इसी व्यवस्था ने कुछ जातियों, उपजातियों को उनकी मातृ भूमि की रक्षा के लिये कन्धे से कन्धा मिलाकर देश के अन्य नागरिकों के साथ-साथ मिलकर शत्रु से लड़ने, तलवार खींचने के अधिकार तक से वंचित करके रखा। हिन्दू मत के पुराने सात्विक पाठों से इसे कुछ अधिक लेना देना नहीं है। जातीय व्यवस्था हमारे समाज में इतने गहरे तक पैठ गई है कि यहाँ के मुसलमान और ईसाई, जिनके पूर्वज मूलतः हिन्दू ही थे वह भी इससे अछूते नहीं हैं। हमें यह जानकर और भी दुख होता है कि बालिग मताधिकार और आजादी प्राप्ति के बाद इन कीटाणुओं का विष और भी बढ़ता जा रहा है।

सन् १९४७ के पूर्व राजनैतिक एवं प्रशासनिक सत्ता जिन व्यक्तियों के हाथों में थी, उनमें जातीय व्यक्ति नहीं थे, या इस देश भर से उनके कोई खून के रिश्ते भी नहीं थे, मत देने का अधिकार नगण्य लोगों तक ही सीमित था।

जैसी, जन्म पर आधारित जाति चल रही हैं, भूतकाल में इसकी क्या उपलब्धियां थीं, क्या नहीं थीं ? निश्चय ही एक संकुचित विचार है, लोकतंत्र में इसका कोई स्थान नहीं होना चाहिए। दोनों एक साथ नहीं रह सकते। इनमें से केवल

---

* मुख्य मंत्री (द्वारा शिक्षा मंत्री)

एक ही पनपेगा। यह मनुष्य की सहानुभूति को सीमित और समाज को एक इकाई मानकर उसकी सेवा करने में अयोग्य घोषित कर देती है। यह एक ऐसा वातावरण तैयार कर देती है जिससे एक जाति के निष्ठावान, कर्मठ व्यक्ति के कार्यों का दूसरी जाति के व्यक्तियों द्वारा कोई सम्मान ही नहीं हो पाता। जातीय भावनाओं पर आधारित आरोप-प्रत्यारोप, अधिकतम असत्य होते हैं, लेकिन अनेक बार आधारहीन नहीं होते, जब फैल जाते हैं, तो पूरा वातावरण ही धीरे-धीरे दूषित होता जाता है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि विधायकगण इससे अलग हैं—कई बार जातीयता प्रमुख भूमिका निभाती है इस प्रकार जनहित द्वितीय स्थान पर चला जाता है। यह भावना, मुझे डर है कि धीरे-धीरे राज्य सेवाओं में भी अपना जंग लगाने लगी है।

विदेशी आधिपत्य चला गया है, हमारे विरोध ऊपर उभरकर आने लगे हैं। कोई संयुक्त शत्रु जिससे लड़ा जाए, न बचने से, हम शत्रु के अभाव में अपने बीच में ही शिकार खेलने लगे है। (भाषाई सवाल को छोड़कर) जाति सबसे बड़ी केन्द्रीय शक्ति है जो हमारी अखंडता को खतरा है। मेरी तो यह मान्यता है कि यह जन्म पर आधारित जातीयता राष्ट्र विभाजन का प्रमुख कारण थी। यह समय है, जब हम इसके बारे में गंभीरता से विचार करें।

मैं समझता हूं कि सरकारी स्तर पर हमारे सामने दो खुले उपाय हैं। प्रथम तो यह है कि, हम इस बात की व्यवस्था कर सकते हैं कि केवल वह व्यक्ति ही विधायिका या राजपत्रित सेवाओं में चाहे राज्य की हों या केन्द्र की प्रविष्ट किया जायेगा जो एक निश्चित तिथि के बाद अपनी जाति के बाहर विवाह और यदि वह अविवाहित है, तो ऐसा करने का प्रस्ताव करे। हम किसी को बाध्य नहीं कर रहे हैं। केवल इस बात से निश्चित होकर ठोस प्रमाण प्राप्त कर रहे हैं कि जो विधायिका या उच्च सेवाओं में प्रवेश पा रहे हैं, वे अपनी दृष्टि की व्यापकता और अपनी सेवाओं की पूर्ति में जातीय भावनाओं से संचालित नहीं होंगे। मेरे विचार में, आजकल के नौजवान और पढ़ी लिखी लड़कियां इस बात के लिये सहमत हैं।

हमारा पिछला इतिहास अन्य जातियों में विवाह के उदाहरण, प्रतिलोम प्रकार से भी प्रस्तुत करता है। लेकिन यह तो मेरी समझ में भूतकाल को रोना ही होगा। हम में से बहुत से तो इतनी दूर तक जाने को सहमत नहीं होंगे। इसके लिए संविधान में संशोधन की आवश्यकता पड़ सकती है, इसलिए आज हमारी सरकार को इस प्रस्ताव को लागू करने का प्रश्न उठाने का सवाल ही नहीं है। दूसरा कदम जो बहुत सामान्य है, हम यह ले सकते हैं कि, कोई शैक्षणिक संस्थान

यदि उसका नाम जाति पर है तो उसे मान्यता नहीं दी जायेगी। मैंने यह सवाल लगभग चार वर्ष पूर्व उठाया था, लेकिन कुछ कानूनी अड़चनें बतायी जाने के कारण मामला ताक में रख दिया गया। मेरे विचार में इसे दुबारा उठाया जाना चाहिये। कानूनी अड़चनें साफ की जायेगीं और उन्हें किया भी जाना चाहिए।

हस्ता०/-
चरण सिंह
२६-६-५३

नीचे दिये गये दो पत्र चरणसिंह ने राजपूत नेशनल हाई स्कूल पिलखुवा, मेरठ जिला के प्रधानाध्यापक को लिखे थे। इन पत्रों से स्पष्ट हो जायेगा कि पढ़े लिखे हिन्दुओं ने इतिहास से कोई सबक सीखने में किस प्रकार नकारात्मक दृष्टि-कोण अपनाया है।

१३ फरवरी, १९५१

प्रिय प्रिंसिपल महोदय,

पिछली प्रथम जनवरी को आपके स्कूल के प्रबन्धक मंडल के भाषणों के जवाब में, सामान्य प्रतिक्रिया स्वरूप शैक्षणिक संस्थाओं के नाम जाति विशेष के आधार पर रखे जाने के विरुद्ध, मैं बोला था। मैं समझता हूं कि मेरे विचारों को काफी इकट्ठा कर इस प्रकार का प्रचार किया गया है कि मैं राजपूत जाति का विरोधी हूं इत्यादि इत्यादि। अभी तक तो मैंने इसको कोई विशेष महत्व नहीं दिया था, लेकिन अब मैं समझता हूं कि मुझे अत्यधिक विवादास्पद बनाकर घसीटने का, प्रथम सप्ताह (फरवरी) में पिलखुवा में आपकी अध्यक्षता में हुई बैठक में कई वक्ताओं ने प्रयास किया।

आपको शायद इस बात की जानकारी नहीं है कि मैंने जब से सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया तब ही से इसी प्रकार के विचार प्रकट करता रहा हूं। विशेष रूप से इनको जाट बाहुल्य क्षेत्रों में जब गया हूं तो अधिक सशक्त ढंग से प्रकट किया है। आप तो एक पढ़े-लिखे व्यक्ति हैं और आप इस बात को अच्छी तरह से समझते हैं कि हमारी गिरावट और राजनैतिक दासता का प्रमुख कारण जातिगत संकीर्णता सदियों से रही है। संकीर्ण जातीयता की आग, हवा देने से बढ़ तो सकती है लेकिन इससे लाभ किसी को नहीं होने वाला। आप एक शैक्षणिक संस्था के प्रमुख हैं और आपको अच्छी तरह जानना चाहिए।

आप मुझे राजपूतों का शत्रु समझते हैं। आपकी तरह के सोचने वाले जो

लोग जाटों में हैं वे मुझे उसी कारण जाट विरोधी समझते हैं। आप यदि मेरे समुदाय के वरिष्ठ लोगों से बातचीत करें जिनका संबंध बरहट (जि० मेरठ) के जाट कालेज या सईदपुर (जि० बुलन्दशहर) से है आप पायेंगे कि मैं जाट समुदाय को छोड़कर अन्य हरेक समुदाय का मित्र हूं। लेकिन आप और ये सब लोग गलती पर हैं। हमें इतिहास से सीखना चाहिए कि यदि हम अब भी जातियों और गोत्र में बंटे रहेंगे तो हम सभी विभिन्न दिशाओं में खिचते चले जायेंगे।

शुभकामनाओं सहित,

प्रति, भवदीय
प्रिंसिपल, हस्ता/-
राजपूत राष्ट्रीय उच्चतर विद्यालय, पिलखुवा चरण सिंह
जिला मेरठ

१६ मार्च, १९५१.

प्रिय श्री वी.एन. सिंह

आपका दिनांक रहित पत्र प्राप्त हुआ। मुझे किसी ने गुमराह नहीं किया। मैंने एक से अधिक बिन्दुओं से जानकारी हासिल की है और आपका कहना कि बड़ी संख्या में राजपूतों के दिलों में मेरे कथन ने पीड़ा पहुंचाई, यह खुद बताता है कि मेरी जानकारी गलत नहीं है। वे भोले भाले ग्रामीण मुझे समझने में कतई गलती नहीं करते वरन् पढ़े-लिखे लोग भूल कर सकते हैं। मेरे कथन से राजपूतों के दिलों में पीड़ा क्यों कर हुई ? क्या मैंने उनसे कोई अलग व्यवहार किया था। क्या मैंने केवल राजपूतों को अकेले जाति सूचक संस्थाके नाम से वंचित किया था और सब दूसरी जातियों को छोड़ दिया ? क्या मैंने इस तरह की कोई बात कही जिससे उनके आत्म-सम्मान को ठेस पहुंचे। क्या मैंने अपने इन विचारों और भावनाओं को सैकड़ों मचों से प्रचारित किया एव दोहराया नहीं है ?

हालांकि आपको इस बारे में जरा भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। मैं आपसे फिर से आग्रह करूंगा कि आप जरा शान्तिपूर्वक सोचें एवं हमारी इस अभागी मातृभूमि के इतिहास का मनन करें। हमने धर्म एवं राजनीति के क्षेत्र में सदियों से मात खाई है, प्रमुख रूप से जन्म के आधार पर बंटी हुई हमारी हजारों जातियों के कारण ही। यदि देश को राष्ट्र मण्डल में अपनी सही स्थिति पर पहुंचाना है तो हमें जाति एव गोत्र के इन संकुचित दायरों से ऊपर उठना होगा।

जन-मानस का नेतृत्व करने का दायित्व आप और मुझ जैसे पढ़े-लिखे लोगों पर आता है।

भवदीय
हस्ता०/
चरणसिंह

श्री बी.एन. सिंह
एम.ए.,बी.एस.सी.,बी.टी.,
प्रिंसिपल, राजपूत राष्ट्रीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय,
पिलखुवा, जिला मेरठ

१६ फरवरी, १९५१ को श्री चरणसिंह ने प्रदेश कांग्रेस कमेटी की कार्य-कारिणी की बैठक में एक प्रस्ताव रखा कि कांग्रेस का कोई भी सक्रिय सदस्य किसी भी जातीय आधार पर बने संस्थाओं या संगठनों से अपने को सम्बद्ध न करे। तीन महत्वपूर्ण कांग्रेस जनों द्वारा इसका कड़ा विरोध हुआ। प्रस्ताव जो पर्याप्त बहुमत से पारित हुआ निम्न प्रकार से है।

उत्तर प्रदेश राज्य कांग्रेस कमेटी, लखनऊ

दिनांक : २८-२.५१

उत्तर प्रदेश राज्य कांग्रेस समिति की बैठक १६ फरवरी, १९५१ को आचार्य जुगल किशोर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई।

६-जाति-संगठनों के सम्बन्ध में चौ० चरणसिंह ने राज्य समिति के सामने निम्न प्रस्ताव रखा। दिनांक १३-१४ नवम्बर को निर्णयानुसार इसका मसौदा तैयार किया गया। समिति ने सदस्यों के बीच बहस के बाद इस प्रस्ताव को पारित किया।

उत्तर प्रदेश राज्य कांग्रेस समिति (पी.सी.सी.) के मतानुसार कोई भी "कांग्रेसी व्यक्ति न तो किसी ऐसी संस्था का सदस्य होगा और न ही ऐसी किसी संस्था की कार्यवाही में भाग लेगा जो किसी जाति, या जातियों तक ही केन्द्रित हो और न ही अन्य जातियों के बीच वैमनस्य फैलाने में भागीदार होगा। अगर वह किसी कारण से ऐसा करता है तो उसका यह कदम राष्ट्रीय मूल्यों के विरुद्ध माना जायेगा। कांग्रेसी व्यक्तियों की निष्ठा एवं सहानुभूति निश्चय ही अन्य जाति के लोगों की दृष्टि में गिरती है अगर वे इस प्रकार की संस्थाओं के सदस्य बनते है

या उनमें शामिल हो जाते हैं। अगर वह ऐसा करते हैं तो इसके द्वारा जनता की सही सेवा करने से वे निश्चय ही भटक जायेंगे इसलिए समिति का फैसला है कि इस प्रकार का कोई व्यक्ति न तो कांग्रेस का सदस्य और न ही कांग्रेस कमेटी का कोई पदाधिकारी ही बनाया जायेगा।

इस समिति का आगे भी फैसला है कि किसी शैक्षणिक संस्थान का नाम किसी जाति के आधार पर न रखा जाये, समिति राज्य सरकार से यह मांग करती है कि वह इस प्रकार की शैक्षणिक संस्थाओं को किसी प्रकार वित्तीय सहायता न दे।

डाक्टर सम्पूर्णानन्द जो उस समय सरकार में शिक्षा मंत्री थे, वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के कट्टर समर्थक होते हुए भी उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी (पी.सी.सी.) की बैठक में उपस्थित नहीं थे, जिसमें उपरोक्त प्रस्ताव पारित किया गया था। वह चाहते थे कि इस पर दुबारा बहस हो परन्तु अपने विचार को मनवाने में बैठक के अन्दर असमर्थ रहे, जो इसी के लिए बुलाई गई थी।

हालांकि उपरोक्त प्रस्ताव ठंडे बस्ते में चला गया। प्रमुख कांग्रेसी नेताओं तक ने इसका पालन नहीं किया इसके दो उदाहरण निम्नलिखित हैं।

दिनांक १५-११-१९५४ के "नेशनल-हैरल्ड" में निम्नलिखित समाचार छपा था।

पुरुषोत्तम टंडन कानपुर पधारेंगे

(हमारे संवाददाता द्वारा)

कानपुर, रविवार—श्री पुरुषोत्तम टंडन भूतपूर्व कांग्रेस अध्यक्ष नवम्बर, २१ को कानपुर पधारेंगे। वे उसी शाम चिरहाना रोड पर नवनिर्मित खत्री धर्मशाला का उद्घाटन करेंगे।

श्री कमलापति त्रिपाठी ने जो उस समय मुख्यमन्त्री थे सन् १९७२ में लखीमपुर खीरी जिला मुख्यालय में एक बैठक में भाग लिया जिसमें केवल ब्राह्मणों ने भाग लिया था और उन्हें ब्राह्मण कुल श्रेष्ठ के तौर पर सम्बोधित किया गया।

• • •

इस सम्बन्ध में सरकार के कर्तव्य के बारे में श्री चरणसिंह के विचार बहुत क्रान्तिकारी थे। उन्होंने खुद मई २२, १९५४ को पं० नेहरू को खत लिखा

जिसमें इस बात का सुझाव दिया कि संविधान में संशोधन कर अथवा कानून में इस बात को लागू किया जाये कि केवल वे ही नवयुवक जो अपनी जाति के बाहर शादी करें, राज्य राजपत्रित पदों पर लिये जावें (तथा जो अपने भाषाई समुदाय से बाहर शादी करें वे केन्द्र में राजपत्रित पदों पर लिए जावें) किन्तु नेहरू नहीं माने। चरणसिंह का विचार था कि सरकार तो इस मामले में सहयोग का हाथ नहीं बढ़ाती; खाली उपदेश जो हमारे गुरु और महात्मा लोग गौतम बुद्ध के जमाने से देते आये हैं, उनसे कोई लाभ नहीं होने वाला। नीचे श्री चरणसिंह का नेहरू को पत्र दिया जा रहा है।

प्रिय पंडित जी,

काफी समय तक असमंजस में रहने के बाद आपकी सेवा में यह पत्र लिखा था।

जैसा कि आपने अपने भाषणों में कहा है कि भारत विदेशी आक्रमणकारियों का शिकार केवल अपने अन्दर पाई जाने वाली सामाजिक बुराईया क कारण हुआ, न कि विदेशियों की संख्या, वैभव या सभ्यता की परतरी के सबब। एक अंग्रेज लेखक ने अपनी किताब "इंग्लैंड का विस्तार" (एक्सपेंशन ऑफ इंग्लैंड) में यह स्वीकार किया है कि चाहे ये वास्तविकता आम लोगों की जानकारी में हो या न हो, लेकिन जो लोग सार्वजनिक जीवन से सम्बन्धित रहे हैं उनके लिये यह रोज-मर्रा का एक अहम मसला है, धार्मिक और भाषायी मतभेद और जन्म जाति पर आधारित जातिवाद। मैं आखिरी विषय को अकेला सबसे बड़ी बुराई मानता हूं, क्योंकि वे हमारी राजनीतिक दासता का कारण बनी और भारत के विभाजन की भी।

जब ऊंची जाति के हिन्दू खुद अपने धर्म के मानने वाले देशवासियों के साथ समानता का व्यवहार नहीं कर सकते क्योंकि वो सामाजिक रूप से गिरे हुए हैं तो मुसलमानों का ये संदेह बिल्कुल उचित और न्यायसंगत था कि अंग्रेजों के चले जाने के बाद हिन्दू बहुमत उन्हें न्यायपूर्वक व्यवहार नहीं दे सकेगा। लेकिन खैर अब तो यह कहानी पुरानी हो चुकी है।

लेकिन अफसोस इस बात का है कि जैसे हमने इससे कोई सबक नहीं सीखा है, जाति-बिरादरी का द्वेष कम होने के बजाय बढ़ रहा है, शायद जनतंत्र की प्रक्रिया से या रोजगार की तलाश के कारण हमारे बड़े-बड़े नेता ही नहीं, बल्कि नौकरशाही भी इसका शिकार बन चुकी है। ये बात पक्षपात और अन्याय की ओर ले जाती है। इन्सान के दिलोदिमाग को संकुचित और अंधा बनाती है, दोषारोपण और प्रत्या-

रोपण, अविश्वास और शका फैल रही है और अब तो ये बात राजनीति का एक और हथियार बनती जा रही है।

सवाल कायम है कि इसे कैसे मिटाया जाये ?

गौतम बुद्ध के जमाने से अनेकों सुधारक व शिक्षक प्रयत्नशील रहे हैं लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। मैं आपकी सेवा में एक सुझाव पेश करने का साहस कर रहा हूं जिसमें पिछले छः साल से अपने तौर पर अपने क्षेत्र में तजवीज करता रहा हूं।

वर्तमान दौर में जाति-बिरादरी, इंसान की जिन्दगी में शादी के समय ही सामने आती है। इसलिये इस बुराई पर वाकई काबू पाना है तो ऐसे कदम उठाए जो जाति बिरादरी के संबंध को उसके महत्वपूर्ण संबंध के मौके पर यानि शादी-ब्याह के सवाल पर तबाह कर दिया जाये। गोया बुराई को उसके मूल-स्त्रोत पर ही निपटा जाए। नौकरियों के लिए कानून बनाते समय हम तरह-तरह के सुधार प्रस्तावित करते हैं, ताकि सिर्फ वही लोग नौकरी पा सकें, जो सबसे उत्तम हों। ये सुधार केवल उनके शरीर और मस्तिष्क का होता है। लेकिन उसके दिल को नापने का कोई पैमाना नहीं होता ये पता लगाने के लिये कि उसके दिल की हमदर्दियां का क्षेत्र कितना बड़ा है। उसमें हर वो व्यक्ति समा सकेगा जिनसे उसको अपनी अफसरी के कार्यकाल में वास्ता पड़ेगा? मेरी समझ से हमारे देश की जो स्थिति है उसमें ये जांच तभी पूरी उतर सकती है जब हम कम से कम गजेटड नौकरियों में केवल ऐसे लोगों को भरती करें जो अपनी जाति और बिरादरी के संकुचित दायरे से बाहर आकर विवाह करें। इस कानून को बनाकर हम किसी आदमी को उसकी मर्जी के विरुद्ध विवाह करने पर बाध्य नहीं करेंगे, जैसे किसी को मजबूर नहीं किया जा सकता कि वो ग्रेजुएट हो जाये। ये बिल्कुल कठिन न होगा कि ऐसे नौजवान उपलब्ध कर लिये जायें।

आज हमारे लड़के और लड़कियां काफी संख्या में कालिजों में पढ़ रहे हैं और वे इस प्रकार के कदम उठाने के लिए तैयार हैं। मैं जनप्रतिनिधियों के लिए भी यही शर्त रखना पसन्द करूंगा, बेशक जाति-बिरादरी और विवाह के विषय का ये कानून एक निश्चित तिथि के बाद से ही लागू किया जायेगा जैसे जनवरी १९५५। एक अविवाहित आदमी नौकरी करे या जनप्रतिनिधि चुना जा सकेगा, लेकिन यदि वह में बाद अपनी ही जाति-बिरादरी में शादी कर लेगा, तो उसे नौकरी से इस्तीफा देना पड़ेगा। विशेष रूप से केन्द्र की नौकरियों के लिए हम विभिन्न भाषाओं के बोलने वालों के बीच विवाह की शर्त पर किसी प्रत्याशी को अधिकारी बना सकते

हैं। ये बहुत आवश्यक इसलिए भी हो गया है कि भाषा के विषय में प्रांतों की अलग स्थापना की बात साफ-साफ चल पड़ी है। ये गुंजाइश किसी संकीर्ण और मुनासिब व्यक्ति को भी नुकसान नही पहुचाती है। क्योंकि हमारे शास्त्रों में अनुलूमा शादियो को पवित्र घोषित किया गया है। वास्तविकता ये है कि हम आज के युग की जातियों को विभिन्न गोत्र घोषित करके किसी व्यक्ति को अपने पिता के गोत्र में विवाह करने के लिए हतोत्साहित करते हैं।

अगर सावधान में इस तरह की कोई धारा बढ़ा दी जाये तो भारत की सबसे बड़ी सामाजिक बुराई जिसे राजा जी ने अपने शब्दों में भारत का दुश्मन नम्बर एक कहा हैं, दस वर्ष के अन्दर उसे मौत की नींद सुलाया जा सकता है। देश कभी शक्तिशाली नहीं हो सकता अगर जाति-बिरादरीयां इसी तरह अपनी जड़े जमाये रहीं। यह मसला उस समय तक हल नहीं हो सकता जब तक सरकार इसमें हस्तक्षेप न करे और हस्तक्षेप करके इसकी जड़े न काट दे, नहीं तो एक न एक दिन आपसी संदेह और घृणा की ये आग जो जातियों और बिरादरियों के निजामों ने सदियों से जला रखी हैं, इस मुल्क को जला कर राख कर देंगी...जिस प्रकार दिन के बाद रात का होना निश्चित है उसी प्रकार।

मुझे उम्मीद है कि मेरा ये सुझाव आपको केवल मेरी दिमागी उड़ान नहीं लगेगा। मेरे जैसे व्यक्तियों को व्यक्तिगत अनुभव से ये अहसास है कि ऊंची जातों के अलावा किसी और जाति में पैदा होने का क्या अर्थ है ? वो जातियां जिन्हे विशेष समझा जाता है या जो अपने आपको विशिष्ट समझती है, केवल किसी जाति में पैदा हो जाने के कारण जो घृणा का व्यवहार और अपमानजनक सामाजिक भेदभाव से किसी व्यक्ति से जुड़ जाती है वही इस बात का कारण बना है कि व्यापक स्तर पर लोगों ने इन्हें (हिन्दू धर्म को) छोड़-छोड़ कर दूसरे धर्मों को अपनाने पर विवश कर दिया। सिर्फ वही लोग नही जो जाति-पांति के लोग है (हरिजन) बल्कि अन्य लोगों ने ऐसा किया है। मसलन पंजाब में केवल ४० वर्ष के अन्दर यानि १८९१ से १९३१ तक ५६ प्रतिशत लोगों ने जो जाट थे ये देखकर कि उनके धर्म के लोग उन्हें हकीर नजरों से देखते हैं जबकि इसका कोई नैतिक आधार नही है अपने पुरखों की परम्परा पर लानत भेजकर छुटकारा पा लिया।

बेशक मेरे इस सुझाव और सम्बोधन के प्रस्ताव की खूब मुखालफत होगी, लेकिन अगर हम इसको पूरा करने पर उतारू हो जाए तो विरोधी कुछ समय बाद पिघल जाएंगे। मेरा अनुमान है कि इसका शिक्षित वर्ग में हिन्दू कोर्ट बिल से कहीं अधिक स्वागत किया जाएगा।

चाहे जो भी रोड़े होंगे अगर संविधान में इस तरह का संशोधन कर दिया जाए तो यह इस देश की एक ऐसे ही स्तर की सेवा होगी जैसा कि स्वराज्य हासिल करना था तभी वास्तविक रूप में हमारे देश में स्थायित्व की बुनियाद पड़ सकती है, इससे पहले नहीं ।

मैं हूं आपका
चरणसिंह

पं० जवाहरलाल नेहरू
प्रधान मंत्री, भारत सरकार
नई दिल्ली ।

प्रिय चरण सिंह जी,

२२ मई के पत्र के लिये धन्यवाद ।

आप जानते हैं कि मैं जाति-व्यवस्था समाप्त करने को अत्यधिक महत्व देता हूं । मेरा ख्याल है कि निश्चित रूप से यह हमारे समाज को कमजोर बनाने वाली सबसे बड़ी अकेली वजह है । मैं आपकी इस बात से भी सहमत हूं कि जब तक अन्तंजातीय विवाह सामान्य नहीं माने जायेंगे तब तक जाति व्यवस्था समाप्त नहीं होगी । मैं तो इससे भी बढ़कर यह मानता हूं कि जब तक हम विभिन्न धर्म के लोंगों में होने वाले विवाहों के प्रति अपना पूर्वाग्रह नहीं त्यागेंगे तब तक देश में वास्तविक एकता स्थापित नहीं होगी ।

किन्तु आपकी बात मानकर संविधान के द्वारा लोगों को अपनी जाति से बाहर विवाह करने के लिये बाध्य करना व्यक्तिगत स्वतंत्रता के खिलाफ होगा। विवाह अत्यधिक व्यक्तिगत मामला है । हम इसे और अधिक व्यक्तिगत बनाने तथा पुराने रीति-रिवाजों और परंपराओं से मुक्त करने की कोशिश कर रहे हैं । यद्यपि आपका सुझाव वांछित प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने वाला है किन्तु निश्चित रूप से यह विवाह सम्बन्धी हमारे प्रयासों के प्रतिकूल है ।

हमें अन्य प्रकारों से परिस्थितियां बनानी पड़ेगी । विशेष विवाह बिल इस प्रकार का एक कदम होगा । इसी प्रकार के अन्य कदम भी उठाये जायेंगें । लोग विवाह वहीं करते हैं जहां विचारधारा तथा जीवन स्तर में साम्य होता है । इस प्रकार के विवाहों के अतिरिक्त विवाह अनुपयुक्त होते हैं । ऊपर से लादी गई कोई भी जबर-

दस्ती दम्पत्ति के लिये विनाशकारी होगी। मैं विवाह को कानून या लालच द्वारा नियंत्रित करने के सम्बन्ध में सोच भी नहीं सकता।

आपका
जवाहर लाल नेहरू

श्री चरण सिंह
मंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार,
लखनऊ

नेहरू जी की यह दलील, "विवाह को विधान एवं प्रेरणा से बांधना" किसी भी पढ़े लिखे व्यक्ति को पसन्द नहीं आयेगी। सब जानते हैं कि कोई भी समाज या धर्म ऐसा नहीं है जिसने विवाह चयन के लिये कानून कायदे न बनाये हों; न ही किसी हिन्दू को राजपत्रित सेवा या विशेष तौर पर विधान मंडल की सदस्यता के लिये अन्तर्जातीय विवाह की अर्हता अस्वीकार होगी, जो यह जानते हैं कि यह जाति प्रथा ही हमारी मातृभूमि की सदियों की पराधीनता का कारण है और हाल में बंटवारे के रूप में आई है

उत्तर प्रदेश के राजस्व एवं परिवहन मंत्री श्री चरण सिंह द्वारा कल ऋषिकेश में आयोजित छुआ-छूत विरोधी सेमिनार[1] में समापन सत्र को सम्बोधित करते हुए छुआछूत और जातिवाद के रोग को समाप्त करने के उद्देश्य से एक तीन सूत्री योजना प्रस्तुत की गई।

यह उनका व्यक्तिगत मत था, श्री चरण सिंह ने कहा कि राज्य सरकारों के अन्तर्गत राजपत्रित पद ऐसे योग्यता प्राप्त नवयुवकों को दिये जाने चाहिए जिन्होंने अन्तर्जातीय विवाह किया है या जो अन्तर्जातीय विवाह करने को तैयार हों। आगे उन्होंने कहा कि यदि कोई अविवाहित अधिकारी अपनी जाति से बाहर शादी नहीं करता तो उसे अपने पद बने रहने की इजाजत नहीं देनी चाहिए।

केन्द्र सरकार में ऐसे लोगों को नौकरियां देनी चाहिए जो ऐसे लोगों में शादी कर चुके हैं या करने को तैयार हैं जिनका उनके भाषा समूह से सम्बन्ध नहीं है।

तीसरा सूत्र, जिस पर श्री चरण सिंह ने जोर दिया यह था कि शिक्षण संस्थाओं को अपने नाम के साथ किसी जाति, समुदाय या धार्मिक सम्प्रदाय का नाम जोड़ने की इजाजत नहीं होनी चाहिए, इस तरह की बातों से छात्रों का झुकाव संकीर्ण मनोवृत्ति की ओर हो जाता है। ऐसी शिक्षण संस्थाओं को नियमानुसार दी जाने वाली आर्थिक सहायता सरकार द्वारा रोक दी जानी चाहिए।

श्री चरण सिंह ने कहा कि प्रशासनिक सेवाओं में भर्ती करते समय प्रत्याशी के मानसिक स्तर एवं शारीरिक-क्षमता की परीक्षा ली जाती है। उसकी इस सम्बंध में भी परीक्षा ली जानी चाहिए कि जाति अथवा समुदाय के विषय में उसके क्या विचार हैं। अपनी जाति के बाहर विवाह सम्बन्ध स्थापित करने को तैयार होना ही उसके विचारों का स्वस्थ परीक्षण है।

श्री चरण सिंह ने कहा कि छुआछूत की बुराई को कम करने के और भी उपाय हैं जैसे कि तथाकथित हरिजनों के शैक्षिक और आर्थिक स्तर को ऊंचा उठाना। किन्तु ये तरीके जन्म के आधार पर समाज में किसी को ऊँचा या नीचा समझने की धारणा समूल नष्ट करने के सामने गौण हैं।

श्री चरण सिंह ने कहा कि हिन्दुओं में १३ भाषाएं और ३४०० जातियां और बिरादरी हैं जो एकता में वृद्धि और राष्ट्रीयता की भावना में बाधक रही हैं। इसी कारण हिन्दू समाज में लचीलेपन का अभाव एवं संकीर्णता व्याप्त रही यद्यपि हिन्दू धर्म के समान सहिष्णुता एवं लचीलापन अन्य किसी धर्म में नहीं है।

जातिवाद का शाप जो कि देश की गुलामी और विभाजन का एकमात्र कारण था दुर्भाग्य से दुबारा सिर उठा रहा है। श्री चरण सिंह ने कहा कि इसे किसी भी कीमत पर रोका जाना चाहिए।

राज्य में किये गये भूमि सुधारों की चर्चा करते हुए मंत्री श्री चरण सिंह ने कहा कि हरिजनों को उन सभी बंधनों से मुक्त कर दिया गया है जो उनके विकास में बाधक सिद्ध हो रहे है। उन्हें अपने घरों, पेड़ों और कुंओं का पूर्ण स्वामित्व प्राप्त हो चुका है। जो कि पहले नहीं था तथा अब वे अपनी इच्छाओं के स्वयं मालिक हैं। उन्हें गाँव-समाज में निहित सम्पदाओं का उपयोग करने की सुविधा अन्य लोगों के समान प्राप्त हो चुकी हैं।

श्री चरण सिंह ने बताया कि भूमि आवंटन के मामले में भूमि व्यवस्था समिति द्वारा भूमिहीन श्रमिकों को प्राथमिकता दी गई तथा इसके लिए कोई राशि वसूल नहीं की गई।

भूमि के पुनर्वितरण के प्रश्न के संदर्भ में मंत्री जी ने पुनः दोहराया कि उत्तर प्रदेश में इसकी खास अहमियत नही थी क्योंकि यहां भूमिहीनों का प्रतिशत ५.७ था और भू-स्वामियों की संख्या भी बहुत कम थी। उन्होंने कहा कि यह कहना ग़लत था कि सभी हरिजन भूमिहीन थे और स्पष्ट किया कि हरिजनों में से ६१ प्रतिशत प्रत्यक्ष रूप से भूमि पर आश्रित थे और भूमि पर उनका अधिकार था यद्यपि भूखंड आकार में छोटे थे। उन्होंने कुटीर उद्योगों के विकास की आवश्यकता

पर बल दिया जिससे कि इसे पूरक और वैकल्पिक के रूप में प्रस्तुत किया जा सके साथ ही कृषि भूमि पर दबाव कम हो सके।

श्री चरण सिंह ने संगोष्ठी में भाग लेने वाले प्रशिक्षार्थियों को प्रमाण-पत्र भी वितरित किये।

सन् १९६७ में श्री चरणसिंह जब उ०प्र० के संयुक्त मंत्रिमंडल के नेता थे, तब इसी धारणा से एक विधेयक बनाना चाहते थे लेकिन उनके राज्य मंत्रिमंडल के अन्य साथियों, जो विशेषकर जनसंघी खेमे से थे, ने इसे नामंजूर कर दिया।

चरणसिंह इस प्रथा को हिन्दू या भारतीय समाज की सबसे बड़ी बुराई मानते थे। यह बात भारतीय क्रांतिदल (बी० के० डी०), इस राजनैतिक पार्टी का गठन श्री चरणसिंह ने १९६७ में किया था, के चुनाव घोषणा-पत्र से साफ जाहिर होता है।

इन घोषणा पत्रों में हमारी समाजिक प्रथा की कमियों पर सतत जोर डाला गया है और उसके उन्मूलन के लिये परामर्श भी किया है। इस संबंध में दिसम्बर १९७३ को प्रकाशित घोषणा-पत्र का एक अनुच्छेद निम्न है

"जन्म-जात, जाति-व्यवस्था जो हमारे संस्कारों में एक प्रमुख है, ने हमारे सामाजिक ढांचे को ऐसा बनाया है जिसमें लोग अलग-अलग तबकों में बंट गये हैं। एक दूसरे से अलग-अलग, सदियों से ऊंच-नीच में बंट गये हैं, जिसमें छूआछूत और अनुसूचित या पिछड़ी जातियों जैसी असाध्य महामारी समाज में फैली है।

इस ढाँचे ने हमारी मातृभूमि पर विदेशियों को जीतने के लिये रास्ता बनाया है, इसीलिये हम कमजोर और गरीब हुए। और तो और मुसलमानों ने भी यह सोचा कि जब हिन्दू अपने ही भाईयों के साथ इस तरह का व्यवहार करते हैं तो अंग्रेजों के जाने के बाद वे मुसलमानों से भी अच्छे और अच्छे नहीं रहेंगे। यही धारणा देश के बंटवारे, जो १९४७ में हुआ, के लिये उतनी ही उत्तरदायी है, जितनी कि मुस्लिम लीग की कार्यवाहियां। यह व्यवस्था काम के महत्व के विपरीत है एवं इस प्रकार का वातावरण बनाती है जहां परिश्रम को निरर्थक माना जाता हो।

आगे समाज के [illegible] व्यवस्था जो कि सर्वथा सामाजिक बन्धनों की असमानता पर आधारित है, [illegible] को विरोधी है चूंकि प्रजातन्त्र का प्रथम सोपान [illegible] सहायकारी है और साथ ही आर्थिक

अवसरों के खिलाफ जाती है जिसके बिना कोई राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता। और क्या चाहिये जाति अपरिवर्तनीय है। कोई अपना धर्म परिवर्तन कर सकता है पर जाति नहीं।

अतः बी० के० डी० तो सभी कदमों को उठायेगी जो धीरे-धीरे समाज से जाति के जकड़पन को ढीला करेंगें और पूर्ण रूप से खत्म करेंगे। इस बात को ध्यान में रखकर बी० के० डी० ने "अंर्तविवाह" का प्रतिपादन किया जिसमें उन नवयुवकों को, जो अपनी जात के बाहर शादी करने के हामी हों या जिनकी शादी अपनी जात के बाहर हुई हो, राजपत्रित सेवाओं में प्राथमिकता दी जावेगी।

जहां तक श्री चरणसिंह का व्यक्तिगत सवाल है उन्होंने सन् १६२१ में ही छात्रावास के जमादार बाल्मीकि के हाथों से खाना ग्रहण किया, जब वे आगरा कालेज के छात्र थे। एक जाट लड़के ने सन् १६३२ से १६३६ तक करीब सात साल तक उनके यहां खाना बनाया, जब तक कि वे गाजियाबाद से (जहाँ वे वकालत करते थे) से मेरठ चले गये। और बाद में दूसरी बार १६४३ से १६४६ तक मेरठ में भी सन् १६७३-७४ में लखनऊ में उनके यहां हरिजन खाना बनाता था। सन् १६७४ में उन्होंने एक क्रिश्चियन को खाना बनाने के लिये रखा जो उनके घरेलू काम तब तक करता रहा जब तक वे सन् १६७७ में लखनऊ से दिल्ली चले गये और आगे उनकी एक सुपुत्री ने तथा अनेक निकट संबंधियों ने उनकी मर्जी से और समझाने पर जाति की परिधि के बाहर शादी की है।

अतः हम पाठकों पर छोड़ते हैं कि श्री नेहरू द्वारा उन्हें दी गई "जाटपन" की उक्ति कहां तक ठीक है। कोई जिस तरह भी समझाने की कोशिश करे, परन्तु जिस संदर्भ में यह उक्ति कही गई थी, अपमानजनक थी। सही माने में इसका मतलब है गंवारपन या अभद्र व्यवहार। श्री चरणसिंह के विचार से उनके पत्र के जवाब में केवल क्षमा याचना ही एक मात्र उत्तर है। खैर, हकीकत में मामला यह है कि श्री नेहरू ने जब भी श्री चरणसिंह के बारे में सोचा उनके सामने उनकी जाति ही धरातल पर आई (जैसा कि अधिकांश हिन्दू समाज के उच्च वर्ग के लोगों के दिमाग में भी आता है) और कभी भी उनके एक व्यक्ति या सार्वजनिक कार्यकर्ता के रूप में अच्छाई या बुराई सामने नहीं आई।

बहुत आश्चर्य होता है जब श्री नेहरू चरणसिंह के खिलाफ जो आरोप लगाते है, वे अपने खुद के काश्मीरी ब्राह्मणों के प्रति अतिरिक्त मोह को एवं रिश्तेदारों के मोह को भूल जाते है। हरचीज होते हुए भी, जब देश की सुरक्षा एवं दुज्जन की

बाजी लगाई जो उनके ही समय आम चर्चा का विषय रहा। उनकी इस चिन्ता के लिये धन्यवाद, जिसकी वजह से श्री नेहरू के जमाने में एक भी काश्मीरी नवयुवक बेरोजगार नही रह सकता था। उन्हें कभी यह बात भी ध्यान में नही आई कि उन्हें इस संस्था की कार्यवाही में भाग नहीं लेना चाहिये, जिसकी सदस्यता केवल उनके अपने काश्मीरी पंडितों के समुदाय तक ही सीमित हो। इसे उन्होंने अक्सर किया। जबकि चरणसिंह ने कभी जाट सभा के अधिवेशन में भाग नहीं लिया। दूसरी तरफ उन्होंने जाट हाई स्कूल, बड़ौत (मेरठ) के मुख्य अध्यापक तथा जिला बुलन्दशहर के जाट कालेज का प्रधानाध्यापक का पद ठुकराया चूंकि इन संस्थाओं का नामकरण उनकी जाति का सूचक था।

जहां तक हमारी वर्तमान प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी की बात है वे अपने प्रभावशाली पिता से कहीं अधिक जातिवादिता से पीड़ित हैं और बेशर्मी से श्री चरणसिंह को जातिवादी कहने में तब भी नहीं चूकतीं जब विदेशी संवाददाताओं से साक्षात्कार करती हैं।

बाद में १९८० में एक स्थानीय पत्रिका प्रोब को दिए एक साक्षात्कार के दौरान श्रीमती गांधी ने कहा था "हाल में चौधरी चरण सिंह द्वारा केन्द्रीय मंत्रि-मंडल में महत्वपूर्ण पद पर रहने के बाद ही राष्ट्रीय जीवन के हर क्षेत्र में जातीयता अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई।" उनके इस कथन का जवाब देते हुए १५ जुलाई को एक प्रेस वक्तव्य के माध्यम से श्री चरण सिंह ने श्रीमती गांधी को चुनौती दी थी। उन्होंने इस वक्तव्य में कहा "श्रीमती गांधी ने जानबूझ कर यह गलत वक्तव्य दिया था। इसका उद्देश्य मुझे बदनाम करना था, ताकि लोगों का ध्यान उनकी सरकार द्वारा किये गलत कामों तथा उसकी असफलता की ओर से हटाया जा सके। वह केन्द्रीय मंत्री के रूप लिए गये मेरे एक भी ऐसे निर्णय का उदाहरण नहीं दे सकतीं जिसकी वजह से जातीयता की भावना को बढ़ावा मिला हो। इसकी ओर यदि कोई भी उनके मंत्रिमंडलीय सहयोगियों की सूची तथा उन प्रत्याशियों की सूची पर निगाह डाले जिन्हें उन्होंने उत्तर प्रदेश विधान सभा के लिए चुना है तो स्पष्ट हो जायेगा कि यह आरोप श्रीमती गांधी पर ज्यादा सही उतरता है।

"मैंने मई १९५४ में पंडित जवाहर लाल नेहरू को एक पत्र लिखकर सलाह दी थी कि जन्म पर आधारित हमारी समाज व्यवस्था ही सदियों से चली आयी। हमारी राजनैतिक गुलामी के लिए जिम्मेदार रही है अतः हमें इसे समाप्त करने के लिए ठोस कदम उठाने चाहिये। मैंने राज्यों में राजपत्रित पदों के इच्छुक युवक-

युवतियों के अन्तर्जातीय तथा केन्द्र सरकार के अन्तर्गत काम करने के इच्छुक युवक-युवतियों के लिए विभिन्न भाषा समुदायों में शादी करने की सलाह दी थी। किन्तु पंडित नेहरू ने इसे स्वीकार नहीं किया। शायद वह जातीयता तथा भाषावाद को राष्ट्रीय एकता में बाधक नहीं मानते थे। वह स्वयं काश्मीरी पंडितों की सभाओं में शामिल होते थे।

''१९६८ में मैंने श्रीमती गांधी को भी यही दोनों सुझाव दिये थे। इसका भी कोई परिणाम नहीं निकला। पिछले ३० वर्षों से मैं उपरोक्त दृष्टिकोण का प्रचार विभिन्न जनसभाओं में करता रहा हूं। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री के रूप में काम करते हुए मैंने यह नियम निर्धारित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी कि राज्य में किसी भी ऐसी शिक्षा-संस्था को राजकीय सहायता नहीं दी जायेगी। जिसका नाम किसी जाति विशेष के आधार पर रखा जायेगा। परिणामस्वरूप इस प्रकार की संस्थाओं ने तुरन्त नाम बदल लिया।

''यदि श्रीमती गांधी बिहार में जनता सरकार द्वारा लिए गये नौकरियों के आरक्षण के निर्णय को ध्यान में रखकर यह कह रही हैं तो उन्हें यह नहीं भूलना चाहिये कि केरल, कर्नाटक तथा आंध्र प्रदेश की कांग्रेस सरकारों ने बहुत पहले यह निर्णय लिया था किन्तु तब इसके खिलाफ कहीं कोई आवाज नहीं उठी थी।

''हाल ही में हुए विधान सभा चुनावों, खासकर, उत्तर प्रदेश तथा बिहार के चुनावों ने असंदिग्ध रूप से सिद्ध कर दिया है कि जातिवादी कौन है। कुछ विशेष जातियों के हर स्तर के सरकारी कर्मचारियों के तबादले किये गये। उन्हें अपमानित किया गया, यद्यपि उनकी संख्या नगण्य थी। दूसरी ओर श्रीमती गांधी की जाति के कर्मचारियों तथा अन्य दो एक जातियों के कर्मचारियों पर, इंका प्रत्याशियों को चुनकर भेजने के निर्देश के साथ, पूरी चुनाव व्यवस्था का भार सौंप दिया गया। इसी परिस्थिति के चलते वह बागपत के उन पुलिस अधिकारियों को दण्डित नहीं कर पा रही हैं जिन्होंने ऐसा अकथनीय अपराध किया था जिसकी भारतीय इतिहास में मिसाल मिलना मुश्किल है। वजह यही थी कि बागपत से श्रीमती गांधी के उम्मीदवार को चुनवाने का श्रेय इन्हीं पुलिस अधिकारियों को है। इस श्रेय को स्वीकार करते हुए स्थानीय कांग्रेस (इ) कार्यकर्ताओं ने थाने के अन्दर एस. एच. ओ. को फूलमाला पहनाकर उसके पैर छुए थे। समस्त कानूनों की उपेक्षा कर चुनावों में सक्रिय रूप से भाग लेने की वजह से ही राज्य की पुलिस तथा न्यायपालिका स्वयं को हालात का मालिक समझने लगी है। नौकरशाही समझने लगी है कि जातीयता के आधार पर कांग्रेस (इ) के विरोधियों के खिलाफ कार्रवाई कर उन्हें समाप्त करना उनका अधिकार तथा कर्तव्य है। जातिवाद की वजह से समाज में बनी खाई

को पूरने के स्थान पर श्रीमती गांधी जातीयता की आग को हवा दे रही हैं क्योंकि इससे उनका राजनैतिक स्वार्थ सिद्ध होता है।

"जहां तक व्यक्तिगत रूप से मुझे या किसी दूसरे को समाप्त करने का सवाल है वह झूठ के आधार पर कभी नहीं किया जा सकता। इसके बावजूद मैं श्रीमती गांधी के सम्मुख एक प्रस्ताव रखना चाहता हूं-यदि श्रीमती गांधी १९५४ में पंडित नेहरू को दिये मेरे दोनों सुझावों को संसद के सम्मुख प्रस्तुत कर तदनुसार कानून बना देती हैं तो मैं राजनैतिक जीवन से सन्यास ले लूंगा। इस से श्रीमती गांधी के जीवन में खटकने वाला कांटा दूर हो जायेगा और मुझे संतोष होगा कि, अप्रत्यक्ष रूप से ही, मैंने अपनी अभागी मातृभूमि की सेवा की है।

चरण सिंह

१५ जुलाई १९८२

जातिवादिता का आरोप श्री चरणसिंह या किसी और के खिलाफ एक ऐसे व्यक्ति द्वारा लगाया जाना, जो देश के सर्वोच्च राजनैतिक पद पर आसीन होकर शासन की सारी नीतियों और शक्तियों को, अपने ही बेटे का चाहे उसमें एक राजनैतिक की योग्यता और अनुभव न हो, अपना उत्तराधिकारी बनाने में प्रयत्नशील हो, कहां तक उचित है? जो व्यक्ति अत्यधिक रूप से कुनबा परस्ती का दोषी है वह तार्किक रूप से जातिवाद के दायरे से भी कभी ऊपर नहीं उठ सकता।

चरणसिंह को व्यक्तिगत तौर पर बदनाम करने पर भी जब श्रीमती गांधी को तसल्ली नहीं मिली जो वे उनके पूरे समुदाय को बदनाम करने की सीमा तक बढ़ गईं। यह दि० २२-८-१९८० को "पायोनियर" में दि० १३ अगस्त को मुरादाबाद में हुए अग्निकांड के संदर्भ में प्रकाशित लेख के इस भाग से साफ हो जाता है।

साम्प्रदायिक उत्तेजना की शुरूआत; भारत की छवि धूमिल करने की सुनियोजित कार्यवाही

जनार्दन झा द्वारा

यह पहला मौका नहीं है जब उत्तर प्रदेश की पुलिस, खासतौर पर राज्य की सशस्त्र पुलिस, साम्प्रदायिक और मुसलमान विरोधी होने की दोषी पाई गई है। इस

बार भी जब प्रतिपक्ष के समद सदस्यों का एक दल प्रधानमंत्री से मिला उन्होने इस तरह की राय जाहिर की कि उत्तर प्रदेश की सशस्त्र पुलिस में जाटों की अधिक भरती है, जिनकी साम्प्रदायिक प्रवृत्ति सर्वविदित है।

अब एक प्रधानमंत्री द्वारा इस तरह का बयान, न केवल गैर-जिम्मेदाराना है बल्कि शरारतपूर्ण है। लोकदल के एक **मुस्लिम** सांसद द्वारा खोज की गई। मामले की सचाई यह है कि पी.ए.सी. की जो शक्ति मुरादाबाद मे पदस्थ थी उसमे राजपूत और ब्राह्मण मिलाकर करीब ६७ प्रतिशत थे व जाट मुश्किल से ३ प्रतिशत थे। और दो या तीन जाट पुलिस अधिकारियों को जो 'शायद गलती से मुरादाबाद में पदस्थ थे तुरन्त दंडित कर दूसरी जगहों पर स्थानान्तरित किया गया। चूंकि वे हिन्दुओं द्वारा सताये मुसलमानों का मसला ठीक करने का दुःसाहस कर सकते थे। जाट पुलिस अधिकारी जो कि अपनी आत्मा की आवाज और देश के प्रति सेवा से बंधे थे, इस तथ्य के बावजूद कि अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट जो कि मुसलमानों की भीड़ के उन्माद का शिकार हुआ एक जाट अधिकारी था, दंडित किये गये।

• • •

पूरे देश में दो-चार या पांच ऐसी जातियां हैं जो कुल मिलाकर एकाधिकार-पूर्वक देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक प्रशासनिक और शैक्षणिक सत्ता का उपभोग करते हैं और ब्राह्मण समुदाय इस सत्ता में, यों कहा जाए लूट में, सर्वाधिक हिस्सा पाते हैं। निम्नलिखित आंकड़े बतायेंगे कि किस तरह कम संख्या में होने के बावजूद दूसरे लोगों की अपेक्षा ब्राह्मण लोग जन सेवाओं में उच्चतर स्थिति में हैं।

तालिका (क)

शीर्षस्थ राजनैतिक एवं प्रशासनिक अधिकारी

पदनाम	कुल संख्या	केवल ब्राह्मणों की संख्या	क्र० ३ अनुपात २ में प्रतिशत
राज्यपाल/उपराज्यपाल	२७	१३	५०
राज्यपाल/उपराज्यपाल के सचिव	२४	१३	५४
केन्द्र के कैबिनेट मंत्री	१९	१०	५३
राज्यों के मुख्य सचिव	२६	१४	५४
मंत्रियों के निजी सचिव (कैबिनेट, राज्य एवं उपमंत्री गण)	४९	३४	७०
सचिव, अतिरिक्त सचिव, संयुक्त सचिव उनके समकक्ष केन्द्र में	५००	लगभग ३१०	६२
उपकुलपति	९८	५०	५१
सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश	१६	९	५६
उच्च न्यायालयों व अतिरिक्त उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश	३३०	१६६	५०
राजदूत/उच्चायुक्त	१४०	५८	४१.५
सार्वजनिक क्षेत्रों में अधिग्रहीत इकाईयों के प्रमुख (इसमें सभी इकाइयां सार्वजनिक निकायों की स्थायी निगम बनाती हैं, शामिल हैं)			
केन्द्र	१५८	९१	५७
राज्य	१७	१४	८२

गृह सचिव तथा दो को छोड़कर दिल्ली के स्तर के सभी आठ पुलिस संगठनों के प्रमुख तथा अधिकतर सभी विधि अधिकारी आदि ब्राह्मण रहे। और भी केन्द्र सरकार द्वारा स्थापित और संचालित जवाहरलाल नेहरू विश्व विद्यालय के १८७ में ६५ यानि ५१ प्रतिशत, एक समुदाय यानि ब्राह्मण हैं।

उपरोक्त आंकड़ों में यहां-वहां की गलती के लिये ५ प्रतिशत की ढील रखें तो यह तालिका एक हृदय हिलाने वाला दृश्य उपस्थित करती है। कुल आबादी के ५ प्रतिशत से कम का समुदाय उनके उचित भागीदारी का १० गुना देश की जन प्रशासन के सोपान को घेरे हुए हैं और ६५ प्रतिशत अपनी उचित भागीदारी का आधे से भी कम भाग।

केन्द्रीय सरकार की नौकरियों में जो तथ्य सच पाये गये हैं वही अधिकतर प्रांतों के बारे में भी सच है। उदाहरण के लिये उत्तर प्रदेश जो सबसे बड़ा प्रदेश है, यहां पर ब्राह्मण कुल संख्या का ६ प्रतिशत हैं।

पहले ब्राह्मण कुल संख्या के ४.४१ प्रतिशत थे, (१६३१ तक) पर विभाजन के बाद (१६४७) हिन्दुओं की संख्या को ध्यान में रखते हुए इनका औसत बढ़ गया तथा इसी परिणामस्वरूप ब्राह्मणों का प्रतिशत ५.४ या इसके आस-पास के लगभग आज होगा।

तालिका २

उत्तर प्रदेश

पदनाम	पद संख्या	ब्राह्मण
• सचिव/अतिरिक्त सचिव/संयुक्त सचिव, उपसचिव व समान पद	२२६	१२४ (५४%)
• अध्यक्ष/आयुक्त/संचालक/उपाध्यक्ष/अतिरिक्त आयुक्त/संयुक्त आयुक्त/संयुक्त संचालक/उप-आयुक्त/उप संचालक	२०२	११६ (५७%)
• प्रवर पुलिस महानिरीक्षक/पुलिस महानिरीक्षक/ अतिरिक्त पुलिस महानिरीक्षक/उप महानिरीक्षक	५३	३० (५७%)
• प्रशासकीय अधिकारी/प्रमुख प्रशासक/मुख्य महालेखाकार/अतिरिक्त महालेखाकार	१३७	७८ (५७%)
• जिला मजिस्ट्रेट/जिलाधीश/पुलिस अधीक्षक/ पुलिस अधीक्षक (अपराध अनुसंधान शाखा) जिला चिकित्सा अधिकारी	२५६	१४८ (५८%)

कुल ११४ में आज उ०प्र० में एक या दो से अधिक जिला मजिस्ट्रेट अथवा, पुलिस-अधीक्षक पिछड़ी जातियो में से, जो कि कुल आबादी की ५० प्रतिशत से अधिक है, नहीं है (इसमें हिन्दू एवं मुसलमान दोनों हैं) ।

उपरोक्त तथ्यों के विपरीत निम्नलिखित तालिका बताती है कि हरियाणा में जाटों की स्थिति क्या है जो कि आबादी का २८ प्रतिशत हैं।

तालिका-३

हरियाणा

पदनाम	पद संख्या	जाट
सचिव/संयुक्त सचिव/उप सचिव/अवर सचिव (प्रतिनियुक्ति शामिल)	१०४	६ (६%)
संचालक/अतिरिक्त संचालक/संयुक्त संचालक/उपसंचालक/आयुक्त/उप आयुक्त/मुख्य वास्तुविद/सलाहकार/वन संरक्षक/प्रमुख मन्त्री/समान पद	१७८	२० (११.३%)
पुलिस महानिरीक्षक/पुलिस उप महानिरीक्षक/पुलिस अधीक्षक/उप पुलिस अधीक्षक (प्रतिनियुक्ति शामिल)	२६	३ (११.८%)

हो सकता है कि इस आरोप के उत्तर में कि शासकीय सेवाओं में ब्राह्मण आबादी अपनी शक्ति के अनुमान में कहीं ज्यादा बढ़कर बने हुए दूसरे ९५ प्रतिशत लोगों के हक के मूल्य पर प्रतिनिधित्व करते हैं, कांग्रेस (ई) का नेतृत्व इस बात को व्यक्त करे कि उसका शासकीय सेवाओं की भर्ती या पदोन्नति मे कोई हाथ नहीं है। जो कि ठीक नहीं है, लेकिन यह बहाना उस समय दलील नहीं दे सकता जब ब्राह्मणों का अधिक बढ़ा हुआ यह अनुमान (और प्रतिशत) विधायकों में भी है।

निम्नलिखित तालिका ब्राह्मणों के १९५२ से लोक सभा में प्रतिनिधित्व की संख्या व उसका प्रतिशत बताती है।

तालिका—४

संसद में ब्राह्मणों का प्रतिशत

१. लोकसभा	१९५२	१९५७	१९६२	१९६७	१९७१	१९७७	१९८०
ब्राह्मणों का प्रतिशत	१७३/४९९	२३०/४९०	२१०/५१०	१९२/५२३	१७८/५२३	१३६/५४२	१९०/५३०
कुल संख्या का	३५	४७	४१	३७	३४	२५	३६
अनुसूचित और जन-जातियों को छोड़कर आबादी का	४५	६१	५३	४८	४४	३२	४८

२. राज्य सभा	१९५२	१९५७	१९६०	१९६४	१९६८	१९७०	१९७४	१९७८	१९८०
ब्राह्मणों का प्रतिशत	७०/२१६	१०८/२३२	११५/२३६	१०२/२३८	१०४/२३०	११३/२३८	११२/२४०	८४/२४४	८९/२४४
कुल संख्या का	२७	४७	४६	४३	४५	५०	४७	३४	३६

ज्ञातव्य है कि यद्यपि प्रथम लोक सभा में ही जो ब्राह्मणों का कुल प्रतिशत बहुत ऊंचा था यानि ३५ और बढ़कर १९५७ और १९६२ में क्रमशः ४७ और ४१ हो गया, जब श्री जवाहरलाल नेहरू आराम से शासन कर रहे थे। जब गैर कांग्रेसी पार्टियों को बल मिला और लोक सभा में उनको प्रतिनिधित्व मिला तब यह संख्या १९६७ और १९७१ में क्रमशः ३७ और ३४ पर घटकर पुराने आंकड़ों के पास आयी। यह प्रतिशत १९७७ में एकदम घटकर २५ हो गया जब पहली बार जनता पार्टी ने कांग्रेस को हराया। १९८० में जब कांग्रेस पुनः वापस आई तो यह फिर एकदम बढ़कर ३६ हो गयी। राज्य सभा में ब्राह्मणों का प्रतिशत १९५२ में २७ से बढ़कर १९७० में ५० तक पहुंच गया जो १९७८ में जनता शासन काल में घटकर ३४ हुआ। यह प्रतिशत १९८० में यद्यपि बहुत कम बढ़ा चूंकि राज्य सभा में केवल एक तिहाई सदस्य ही प्रत्येक दो चुनाव साल में चुने जाते हैं।

और ज्यादा क्या चाहिए जब लोक सभा की २२.५ प्रतिशत सीटें सुरक्षित हैं और केवल ब्राह्मणों (या दूसरे) के लिए हैं। बाकी पूरे समाज में ब्राह्मणों का प्रतिशत ९/३१ के अनुपात में बढ़ेगा।

उत्तर प्रदेश के विधान मंडल के मई-जून १९८० के आम चुनाव में ब्राह्मणों को, जिनका आबादी में भाग केवल ९ प्रतिशत है १२० टिकट प्राप्त हुए जब कि हिन्दुओं की अन्य पिछड़ी जातियों ने, जो कुल मिलाकर आबादी का ४५ प्रतिशत बनाती हैं, केवल २६ टिकट प्राप्त किये। इसका मतलब हुआ एक ब्राह्मण २६ पिछड़े व्यक्तियों के बराबर था।

• "उन्नीस सौ चौरासी" (नाइनटीन एटी फोर) पुस्तक के लेखक श्री जार्ज ओरवेल के शब्दों को लेते हुए "सभी भारतीय बराबर हैं, परन्तु कुछ भारतीय विशेषकर ब्राह्मण, दूसरों की अपेक्षा अधिक बराबर हैं। इस बराबरी के लिये कौन जिम्मेदार है?

हाल ही में प्राथमिक को-ओपरेटिव सोसाइटियों के अध्यक्षों तथा प्रशासकों के दफ्तर का कार्यकाल उत्तर प्रदेश में समाप्त होने को है। चुनाव करवाने की बजाय राज्य सरकार ने मनोनयन को ठीक समझा है। आज की तारीख जब तक पुस्तिका प्रेस में जाती है ८२४७ अध्यक्षों में से ७१०० अध्यक्ष मनोनीत किये जा चुके हैं।

• "एनिमल फार्म" लेखक जार्ज आरवैल, पाठ—१० से

७१०० मनोनीत अध्यक्षों में से ५० प्रतिशत ब्राह्मण हैं। कौन जातिवादी है ? कृपया क्या श्रीमती गांधी उत्तर देंगी ?

यहां यह उल्लेख करना असंगत नहीं होगा कि उत्तर प्रदेश की चार बड़ी जातियां—ब्राह्मण (९ प्रतिशत), यादव (८.४ प्रतिशत), राजपूत (७.५ प्रतिशत), और कुर्मी (३.५ प्रतिशत) में से यादव और कुर्मियों को १९३७ से १९६७ तक कांग्रेस सरकार में कोई स्थान नहीं दिया गया (नवम्बर १९५८ से मार्च १९६२ तक यादव उपमन्त्री को छोड़कर)। इस दौरान बनी सभी छः सरकारों में ब्राह्मण, वैश्य और राजपूत ही शामिल थे। केवल १९६७ में श्री चरणसिंह के विद्रोह के परिणाम स्वरूप दो यादवों और एक कुर्मी को कैबिनेट मंत्री बनाया गया और अन्य पिछड़ी जातियों को भी नई सरकार में स्थान दिया गया।

१९७१-७३ में पं० कमलापति त्रिपाठी की अध्यक्षता वाली सरकार में कैबिनेट तथा राज्य मंत्री ३० थे, जिनमें से १५ यानि ५० प्रतिशत ब्राह्मण जाति के थे।

प्रशासन से सम्बद्ध आंकड़े, जो ऊपर दिये गये हैं, इस हिमशिला (जातिवाद) के झुकाव की ओर ही संकेत करते हैं। सारे देश में कोई विभाग या कोई सरकार जाति की इस बीमारी से मुक्त नहीं है। यह ऊंची सीढ़ियों के दफ्तर के लिए जीना सच है, उससे कहीं ज्यादा नीची सीढ़ियों के दफ्तर के लिए भी सच है।

देश का अन्दरूनी राजनीतिक और प्रशासकीय ढांचा इस सामाजिक जहर से प्रभावित होता है जो व्यक्ति की योग्यता, न्याय अथवा जनहित की जगह जाति के आधार पर एक व्यक्ति के लिए पक्षपातवाद तथा दूसरों के लिए अन्याय को बढ़ावा देता है।

जाति के प्रति यह झुकाव केवल भर्ती में ही प्रतिबिम्बित नहीं होता वरन् तबादलों, पदोन्नति, पुस्तिका तथा कार्यकाल वृद्धि में भी होता है।

नीचे दिया गया उदाहरण, इंडियन एक्सप्रेस १०/११/८१, नई दिल्ली में प्रकाशित हुआ। यह सारे देश में रोज हो रही हजारों घटनाओं में से एक है।

ब्राह्मणों के लिए विस्तारवाद तथा ऊंचे पद

इण्डियन एक्सप्रेस पी.के. कृष्णाकरण

पटना, नवम्बर ९—बिहार के स्वास्थ्य विभाग में एक बेमिसाल घटना घटी।

जैसा कि मालूम हुआ कि बिहार के मुख्य मन्त्री श्री जगन्नाथ मिश्र ने २० अक्तूबर को "कैबिनेट की स्वीकृति मिले बिना ही" एक आदेश जारी करके डा० चौबे, सिविल सर्जन, रांची के कार्यकाल को बढ़ाया। इस आदेश से यह जाहिर होता है कि राज्यों में एक आदमी अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए अपने पद का दुरुपयोग करते हुए, किस सीमा तक साधारण नियमों को ताक पर रख सकता है। यह अनियमितता जाहिर न होती यदि हरिजन राज्य स्वास्थ्य मंत्री श्री दिलकेश्वर राम तथाकथित वफादार ततैयों के छत्ते रूपी मंत्री-गुट को छेड़ने का जोखिम न उठाते।

अब तक, कुछ सालों से, स्वास्थ्य विभाग में मजबूती से इन नियमों का पालन किया जाता था कि स्वास्थ्य विभाग में किसी के भी सेवा-कार्य काल में समय-वृद्धि नहीं देनी चाहिए क्योंकि यह मुख्यत: प्रतीक्षा सूची से पदोन्नति और नये डाक्टरों के लिए भर्ती के साधनों को धीमा करती है, उनमें से बहुत से डाक्टर जगहों की कमी होने के कारण खाली हैं।

वर्तमान घटना में एक आदिवासी डा० श्रीमती एलेन ठाकुर लाभान्वित होनी चाहिए थी, जिसको अक्तूबर के आखिरी सप्ताह में सरकारी खबर पहुंचाई गई कि डा० चौबे से कार्यभार ले लो, जो अक्तूबर ३१ को सेवा मुक्त हो रहे थे।

एक सरकारी सूचना द्वारा डा० चौबे को सलाह दी गई कि अपनी सेवा निवृत्ति के समय अपना कार्यभार डा० श्रीमती एलेन ठाकुर को सौंप दें। डा० चौबे जैसे-तैसे पटना पहुंचे और अपने कार्यकाल की वृद्धि का कार्य एक आदमी द्वारा आसानी से वर्तमान मुख्य मंत्री से करा लिया, जैसा कि विश्वस्त सूत्रों से पता चला है। परिणामस्वरूप मुख्य मंत्री ने अपने को "कैबिनेट से स्वीकृति लिए बिना" कार्यकाल वृद्धि हेतु आदेश देने को तैयार किया।

यह "सुखद" परिवर्तन रांची के अस्पताल में डा० चौबे के पास पहुंचा दिया गया कि जहां भी कार्य कर रहे हैं, जारी रखें, "बिना किसी कैबिनेट द्वारा स्वीकृत अधिसूचना के" जो कि कैबिनेट द्वारा स्वीकृत करने के बाद ही जारी की जा सकती है। इससे पता चलता है कि श्रीमती डा० एलेन ठाकुर को इस प्रक्रिया में किस तरह से एक तरफ छोड़ दिया गया।

इस दुर्भाग्य का शिकार वह अकेली नहीं हुई हैं। कुछ महीने पहले ऊंचे

ओहदों पर नियुक्त उन आदिवासी और हरिजन डाक्टरों, जितनी एक जाति, उदाहरणार्थ "सत्ता प्राप्त ब्राह्मण" के आदमियों द्वारा बदली की गई, की सूची भूतपूर्व स्वास्थ्य मंत्री श्री जाबिर हुसैन द्वारा जारी की गई, जो इस समय युवा लोक दल, बिहार के अध्यक्ष हैं। १६८१ के आखिरी दिनों में लोकसभा के पटल पर रेल मंत्री श्री केदारनाथ पाण्डेय द्वारा समितियों के उत्तर में बताया गया कि ६१६ मनोनीत आदमी जो विभिन्न सलाहकार लिये गये हैं उनमें ३८६ (६३ प्रतिशत) ब्राह्मण थे।

मनोनीत आदमियों को यह अधिकार प्राप्त है कि वे अपनी इच्छानुसार कितने ही दूसरे आदमियों को साथ लेकर देश के किसी भी हिस्से में घूमने के लिये रेलवे की पहली क्लास की सुविधायें ले सकते हैं। इससे यह साबित होता है कि कांग्रेस (ई) के मन्त्री को सार्वजनिक सम्पत्ति को नीजि सम्पत्ति में बदलने का अधिकार प्राप्त है।

ऊपर गिनाये तथ्यों के अलावा, यह दिखाई देता है कि देश के राजनीतिक और प्रशासकीय ढांचों में अपनी वर्तमान स्थिति से ब्राह्मण जाति के नेता अभी भी संतुष्ट नहीं हैं। जैसा कि चण्डीगढ़ से प्रकाशित ट्रिब्यून, १२ जनवरी, १६८२ की रिपोर्ट में दिखाया गया है, कि शायद अपनी शिकायतों को दूर करवाने में ये तब तक प्रयत्नशील रहेंगें, जब तक ये एकाधिकार या लगभग एकाधिकार की स्थिति को प्राप्त नहीं कर लेते।

सुस्ती को दूर करने के लिये ब्राह्मणों की ललकार

हमारे संवददाता द्वारा

गुड़गाँव, ११ जनवरी—हेली मण्डी, तह०—पटौदी में ब्राह्मण सभा के वार्षिक समारोह में, जो श्री चिरंजी लाल शर्मा की अध्यक्षता में कल हुई, उसमें इस आवश्यकता पर जोर दिया गया कि ब्राह्मण अपने को संगठित करके राजनीति में सक्रिय भाग लें।

श्री शर्मा जी ने यह खेद व्यक्त किया कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में धीरे-धीरे ब्राह्मणों की भूमिका कमजोर हो रही है और नौकरियों के अवसर उनसे तेजी के साथ दूर होते जा रहे हैं। इसीलिये उनके लिये यह आवश्यक है कि वे अपने अलगाव के स्वभाव को वदले तथा अपने को विभिन्न क्षेत्रों, में राजनीति सहित, प्रयत्नशील करें।

बहुत से वक्ताओं ने जाति से सामाजिक बुराईयों को दूर करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

पटौदी तहसील ब्राह्मण सभा, जिसकी एक रिपोर्ट दैनिक इन्डियन एक्सप्रेस में प्रकाशित हुई है, से इनके जातिवादी तथा मस्तिष्क के सीमित दृष्टिकोण का स्पष्ट बोध हो जाता है। रिपोर्ट निम्न है—(पाठकों की सुविधा के लिये इसका **हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जा रहा है।**

मध्य प्रदेश में ब्राह्मण विधायकों का गुट

(एन.के. सिंह द्वारा)

एक्सप्रेस न्यूज सर्विस) भोपाल—मार्च ३१—म० प्र० के इतिहास में पहली बार इंका के ब्राह्मण विधायकों ने एक गुट का निर्माण किया है। श्री राधेश्याम शुक्ल, इंका विधायक तथा म० प्र० राज्य सड़क परिवहन निगम के उप-चैयरमैन, के निमंत्रण पर चालू सरकार के लगभग ५० ब्राह्मण विधायक शाम को एकत्रित हुये।

चालू सरकार का एक आदिवासी हरिजन विधायकों का एक गुट पहले से ही है, जो कि समय-समय पर सुचारू रूप से मिलते रहते हैं। जैन विधायकों का भी राजनीतिक मंच पर अच्छा खासा हाथ है। हाल ही में राजपूत विधायकों का गुट भी काफी जोर शोर से उभर कर आया है और गुप्त सभाएं भी कर रहा है।

इस प्रकार राज्य में पहली बार ब्राह्मणों ने भोजन की मेज पर राजनीति शुरू कर दी है, जैसा कि मि० अर्जुन सिंह, द्वारा पद ग्रहण करने के बाद वे काफी अच्छा महसूस कर रहे हैं।

उस दिन श्री अर्जुन सिंह के मंत्री मंडल के सभी सदस्य तथा चालू सरकार के काफी ब्राह्मण विधायक, मि० शुक्ला ने निवास पर उपस्थित थे।

प्रश्न उठता है कि देश के जन समूह में जातिवाद को बढ़ावा देने का जिम्मेदार कौन है ? निश्चय ही इंका की नेता श्रीमती गाँधी ही इसकी जिम्मेदार हैं, जिसने कि जातिवाद को हतोत्साहित करने के स्थान पर इस बुराई को हिन्दू समाज में बढ़ाया है।

नीचे दिया लेख जो कि इंका की आगामी योजना की रूप रेखा को प्रस्तुत करता है, नई दिल्ली से बृहस्पतिवार, १७ जून, १९८२ को दैनिक नवभारत टाइम्स में प्रकाशित हुआ है. इसमें इंका की नूतन विचारधारा चित्रित है—

जाटों को कांग्रेस (इ) की ओर लाने का नया अभियान

(हमारे विशेष संवाददाता द्वारा)

नई दिल्ली, १६ जून—कांग्रेस (इ) ने आमतौर पर किसानों और विशेष रूप से जाट समुदाय पर अपनी राजनैतिक पकड़ को मजबूत करने के लिए नूतन बहुमुखी कार्य योजना बनाई है।

हाल के चुनावों में हरियाणा में लोकदल नेता चौधरी चरणसिंह का जाटों पर जो राजनैतिक वर्चस्व प्रकट हुआ है, उससे कांग्रेस (इ) के उच्च क्षेत्रों में एक चिन्ता व्यक्त हुई और कांग्रेस (इ) के साथ जाट समुदाय का भावात्मक लगाव स्थापित करने की योजना बनाई गई।

कांग्रेस (इ) इस कार्य के लिए कुछ जाट नेताओं को स्थापित करने का विचार कर रही है। सोचा यह जा रहा है कि लोक सभा के अध्यक्ष श्री बलराम जाखड़ को केन्द्रीय कृषि मंत्री बनाकर जाटों को कांग्रेस (इ) के साथ भावात्मक रूप से जोड़ने का प्रयास किया जाय। इस सिलसिले में भूतपूर्व राजदूत श्री भगवानसिंह और राज्य सभा के भूतपूर्व उपसभापति श्री राम निवास मिर्धा के भी नाम लिये जा रहे हैं।

कांग्रेस (इ) ने जिन उपायों के बारे में विचार किया है, उनमें जाट महासभा को फिर जीवित और संगठित करने का इरादा भी है। दिल्ली और दिल्ली के ५०० कि.मी. के घेरे में रहने वाले करीब डेढ़ दो करोड़ जाटों में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और साहित्यिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न प्रकार के मंचों को सक्रिय करने का विचार किया गया है।

इसमें राजा सूरजमल ट्रस्ट को सक्रिय करके अधिकाधिक जाट नेताओं को उसके जरिये जोड़ने का विचार भी है। इसी तरह जाटों के इतिहास को फिर से क्रमबद्ध और आधुनिक सामाजिक-आर्थिक नजरिये से लिखाये जाने का उपक्रम भी किया जायेगा।

दिल्ली क्षेत्र के देहाती इलाकों में बसने वाले ढाई लाख जाटों में इस तरह की संगठनात्मक गतिविधियों को प्राथमिकता देने का विचार किया गया है। यह ज्ञातव्य है कि दिल्ली महानगर परिषद और नगर निगम के चुनाव एक अर्से से नहीं हुए हैं और यह चुनाव देर-सबेर होने हैं।

विभिन्न राज्यों की सरकारों में जो भी जाट मंत्री अथवा जिला परिषद के प्रमुख आदि पदों पर हैं, उन्हें इस लक्ष्य के लिये जुटाया जायेगा। संगठन और सरकार में उन्हें महत्वपूर्ण पदों पर लाने का विशेष रूप से ख्याल रखने का इरादा भी है।

यह ज्ञातव्य है कि एक अर्से तक राजस्थान के जाट पूरी तरह कांग्रेस (इ) के साथ थे। लेकिन आज वे कांग्रेस (इ), लोकदल और कांग्रेस (स) में बंटे हुए हैं, क्योंकि तीन प्रभावशाली जाट नेता श्री रामनिवास मिर्धा, नाथूराम मिर्धा और चौधरी कुम्भाराम आर्य तीन दलों में बिखरे हैं।

आपात स्थिति के बाद चौधरी बंसीलाल के पराभव के बाद हरियाणा के कांग्रेस (इ) का जाट-आधार टूटा और आज उस पर मुख्यतया लोकदल का प्रभाव है। पन्द्रह वर्ष पूर्व जब चौधरी चरणसिंह ने कांग्रेस (इ) छोड़ी थी, तब से ही उत्तर प्रदेश के जाटों के वह सर्वाधिक लोकप्रिय नेता रहे और इस समुदाय में कांग्रेस (इ) का प्रभाव कमजोर हो गया।

कांग्रेस (इ) ने उत्तर प्रदेश व राजस्थान में उसके बाद राजपूतों में अपना प्रभाव योजनाबद्ध ढंग से स्व० संजय गांधी की नीति के अनुसार बढ़ाया था। लेकिन हरियाणा व दिल्ली में कोई वैकल्पिक प्रयास नहीं किये गये।

अब फिर हाल के चुनावों के बाद कांग्रेस (इ) ने जाटों को अपने सामाजिक आधार में जोड़ने का इरादा बनाया है और सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक आधार पर राजनैतिक लगाव पैदा करने और वैकल्पिक जातीय नेतृत्व खड़ा करने की रणनीति बनाई है।

श्रीमती इंदिरा गांधी और उनके सलाहकारों का यह विश्वास गलत है कि हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा अन्य राज्यों में लोकदल का प्रभाव मात्र श्री चरणसिंह की जाति विशेष तक ही सीमित है। उत्तर प्रदेश में "जाट", राज्य की कुल संख्या का केवल १.५% भाग है। उत्तर प्रदेश राज्य के ५७ जिलों में जाट केवल ७ जिलों में ही रहते हैं। सन् १९७४ के चुनावों में, जब लोकदल बी.के.डी. के रूप में था, बी.के.डी. ने उत्तर प्रदेश राज्य के पश्चिमी भाग की अपेक्षा, पूर्वी भाग से अधिक

वोट प्राप्त किये थे। इसका कारण, यह तथ्य था कि लोकदल, देश के ८० प्रतिशत से अधिक लोगों की इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करता है, जिनकी समस्याओं एवं दुर्गति के लिये इंका नेताओं के अन्तर्मन में कभी भी टीस नहीं उठी। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण यह है कि ये लोग राजस्थान नहर तथा अन्य सिंचाई के माध्यमों को पूरा करने के स्थान पर, लगभग १००० करोड़ रुपये, दिल्ली में होने वाले एशियाई खेलों के निमित्त खर्च कर रहे हैं। लोकदल की सामाजिक तथा आर्थिक नीतियां, गांधीवादी तरीके से देश की समस्याओं को सुलझा सकने में समर्थ हैं। केवल इसकी नीतियों के आधार पर बेरोजगारी को समाप्त किया जा सकता है, फलस्वरूप गरीबी समाप्त होगी, आर्थिक ताकतों का सीमित हाथों में केन्द्रीयकरण रोक सकती है तथा आय-विषमताओं को कम कर सकती है। साथ ही लोकदल की नीतियां, वर्तमान सामाजिक व्यवस्था, जो कि जन्मजात है तथा हमारी राजनैतिक दासता और देश के बंटवारे का कारण रही है, के उन्मूलन की हामी रही है। श्रीमती गांधी ने हमेशा से यही कोशिश की है कि वह जाति, भाषा और धर्म के आधार पर जनता को बांट दें ताकि अपने शासन को विस्तृत कर सकें। किन्तु अन्ततः, वह देश के नागरिकों को ज्यादा समय तक बेवकूफ न बना सकेंगी।

अध्याय : २

श्री चरण सिंह का हरिजनों के प्रति रवैया

श्री चरण सिंह के खिलाफ कुलकों के हमदर्द होने के आरोप के अलावा एक और आरोप,जो अवसर कांग्रेस (इ) नेताओं द्वारा विशेष रूप से १९६७ के बाद से, जब उन्होंने कांग्रेस छोड़ी, लगाया जाता है कि श्री चरणसिंह, अमीर किसानों के मित्र हैं एवं हमारे समाज के गरीब तबकों के दुश्मन हैं, विशेष तौर पर हरिजनों के। यह आरोप विभिन्न माध्यमों द्वारा सुनियोजित ढ़ग से डेढ़ दशक से भी अधिक समय से प्रचारित किया जा रहा है। प्रचार माध्यम की कमी की वजह से चरणसिंह या लोक दल द्वारा उसका खंडन ठीक ढंग से नहीं हो पाया ; जिसकी वजह से देश भर में कई बेखबर व्यक्तियों को इस झूठ को सचाई मानने पर बाध्य होना पड़ा है।

सरसरी तौर पर शोषण के दो आयाम हैं, सामाजिक और आर्थिक। जैसा कि होता है, हारने वाला वही व्यक्ति होता है जो सामाजिक और आर्थिक दोनों कमजोरियों से ग्रसित रहता है। अत: जब एक तरह की अयोग्यता या शोषण खत्म होते हैं दूसरा भी जल्दी ही छूट जाता है या छूटने की तैयारी करता है। जहां तक सामाजिक अयोग्यता का सवाल है हिन्दुओं में जाति प्रथा इस बुराई की मूल जड़ है और साथ ही छूआछूत की बुराई और ऊंच-नीच की लहर। पाठकों ने इस बात को अवश्य महसूस किया होगा कि भारतीय समाज के इस प्राथमिक दोष को खत्म करने के लिये श्री चरणसिंह ने जो कदम उठाये या सुझाये, इस सिलसिले में, शायद कोई और अधिक नहीं कर सकता।

आर्थिक मसले को यदि लिया जाये तो हिन्दुस्तान में एक हरिजन विशेष आदर प्राप्त कर लेता है जब वह उस जमीन के टुकड़े का मालिक बन जाता है जिस पर कल तक वह एक मजदूर या बटाईदार के तौर पर काम किया करता था। इसी के विपरीत ऊंची जाति में पैदा हुए हिन्दू भूमिपति के आदर में कमी आ जाती है, जब उसके बटाईदारों को मालिकी मिल जाती है, इस कारण उसे खुद अपने हाथों से आजीविका के लिये परिश्रम करना पड़ता है। हमारे यहां के वातावरण में पहले का हीनभाव और दूसरे व्यक्ति का अहंभाव जन्मजात तौर पर पैदा हुआ है और लगता है काफी समय तक चलता रहेगा।

और जैसा कि उत्तर-प्रदेश के भूमि-सुधारों पर एक पुस्तक जिसे दि किसान ट्रस्ट, दिल्ली प्रकाशित करेगा, में बताया गया है—— कि चरणसिंह की पहल पर जहां उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार लागू होने पर उन सारे

तबकों को जो भूमि पर काम करके जीवन यापन करते थे, लाभ हुआ है, वहीं हमारे समाज के दबे हुए तबके हरिजनों को इससे और भी अधिक लाभ पहुंचा है। शायद भारत का कोई अन्य प्रान्त इस विषय में ऐसा दावा नहीं कर सकता। अतः कोई भी बात जिसमेंश्री चरणसिंह को हरिजनों का शत्रु किसी भी दृष्टिकोण से बताया जाये राजनैतिक महत्वाकांक्षा के आधार पर कुप्रचार ही होगा।

उत्तर प्रदेश में कृषि कानून लागू होने से जो फायदे हरिजनों को हुये उन्हें देखा जाये तो जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार कानून के तहत श्री चरणसिंह ने अपने कई साथियों के कड़े विरोध के बावजूद तुलनात्मक रूप से छोटे और गरीब किसानों को स्थायी तौर पर उत्पादन के अधिकार दिलाये। ये राजस्व रिकार्ड में साहबों के काश्तकार या खेत मजदूर के रूप में अंकित या अतिक्रमण किये हुए थे, जो अंकित ही नहीं थे पर उपखंड अधिकारी द्वारा की गई जांच में जिन लोगों के पास जमीन का कब्जा था उन सभी को १९५२ के भूसुधार कानून के फलस्वरूप फायदे हुए। १९५१ की भारत जनगणना के खंड २ भाग (एक) उत्तर प्रदेश की रपट (पेज ४२४-२५) पैरा १२ में निहित कंडिका ३९५ दर्शाती है कि प्रत्येक हजार से चौरासी अनुसूचित जाति के सदस्य आदिवासी या उनके आश्रित पूर्ण या आंशिक रूप से बिना मालिकी हक के काश्तकार अंकित थे, जबकि यही आंकड़ा आम जनता में केवल ५१ था। इस तरह इस वर्ग में हरिजनों का काश्तकारों का अनुपात जो कुल जनसंख्या का २० प्रतिशत था। इस प्रकार इनकी संख्या बढ़कर ३० प्रतिशत तक हो गयी। भूमि सुधार संशोधित कानून १९५२ और भू बंदोबस्त संशोधन अभियान के कानून लागू करने के पश्चात इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले कुल नामों की संख्या प्रत्येक प्रकार से बढ़कर ५० लाख से अधिक हो गयी। हालांकि इनकी कुल संख्या काफी कम थी, फिर भी जो छोटी सम्पदा उनके पास थीं उन अबसे अधिक बढ़कर इनके पास हो गया।

उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन तथा भूमि सुधार संबंधी कानून सही तौर पर क्रियान्वित किया गया था। यह केवल निराधार शेखी बघारना नहीं है। यह कोई फाउन्डेशन दल जिसका नेतृत्व एक अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ श्री डबल्यू ए० लदेजिस्की ने किया था, की रपट से स्पष्ट हो जाता है। रपट में कहा गया है कि केवल उत्तर प्रदेश में ही एक स्पष्ट रूप से सोचा समझा समाविष्ट कानून लागू और कार्य रूप में परिणित हुआ है। वहां करोड़ों बंटाईदार एवं खेतिहर लोगों को मालिक बनाया गया एवं सैंकड़ों-हजारों को जो बेदखल कर दिया गया था उनके अधिकारों को पुनः स्थापित किया गया है। (योजना आयोग का १९६३ में प्रस्तुत "संकुल जिलों में काश्तकारी की अवस्था" शीर्षक नामक विश्लेषण देखें।)

उत्तर प्रदेश के जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धारा १६८ में प्रस्तावित है कि मान्यता प्राप्त संस्थायें जो कृषि संबंधी प्रशिक्षण देती हैं के बाद में खेतिहर मजदूरों का ही उस जमीन पर पहला हक होगा, जो कि ग्राम भूमि बंदोबस्त समिति द्वारा धारा १९५ या धारा १९७ के तहत पैदावार के लिये उपलब्ध करायी जावेगी। कानून में इस बात का प्रावधान भी था कि जहां गैर अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों के लिये भूमि बंदोबस्त कमेटी को इस तरह की जमीन के लिये परम्परागत दरों से निर्धारित दर का दस गुना कर भुगतान करना होगा वहीं किसी अनुसूचित जाति के व्यक्ति के लिये इस तरह का कोई भुगतान या कर देय नहीं था (धारायें क्र० १७४ ए और १७५)।

जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार कानून के तहत गांव के हर निवासी को उसके मकान के साथ की लगी हुई जमीन, जो पेड़ उसने लगाये और जो कुएं उसने बनाये थे, इन सब को शामिल कर उनका मालिक उसको बनाया गया था। इस प्राव-धान ने हरिजनों को विशेष रूप से लाभान्वित किया चूंकि पूर्व में उन्हें इस तरह के अधिकार कतई प्राप्त नहीं थे और जमींदार की इच्छा पर उन्हें उनके घरों आदि से बेदखल किया जा सकता था (जमींदारी उन्मूलन भूमि सुधार कानून १९५१ की धारा ९ के तहत)।

जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम की धाराओं ११५ एल और ११५ एम के तहत एल. एम. सी (भूमि बंदोबस्त समिति) द्वारा आबादी की जगहों में भी भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को प्राथमिकता दी जानी थी।

चकबन्दी अधिनियम १९५३ (उपभाग ८ ए देखें) में इस बात का प्रावधान था कि चकबन्दी के लिये सिद्धान्त ब्यौरा बनाते समय ग्रामीण हरिजनों एवं भूमिहीनों के लिये आवास हेतु अलग से भूमि का प्रावधान हो। अधिकांशतः यही वह भूमि है, जिसे उत्तर प्रदेश की कांग्रेस (इ) सरकार कहती है कि उसने हरिजनों को मकान बनाने के लिये जमीन उपलब्ध कराई हैं।

श्री चरणसिंह ने सिरतनों (कुमाऊ जिले में बटाईदारों को कहा जाता है) और जो अधिकतर अनुसूचित जातियों के थे, उन्हें सिरदारों के बराबर दर्जा देने में पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त, श्री जगमोहन सिंह जी नेगी (उ० प्र० सरकार में गढ़वाल से मन्त्री) और श्री नारायण दत्त तिवारी के कड़े विरोध के बावजूद क्रियात्मक कदम उठाये हैं। उत्तर प्रदेश में एक सिरदार को स्थायी तौर पर अधिग्रहण के अधिकार प्राप्त हैं।

मार्च १९५३ में पुराने पटवारियों द्वारा इस्तीफा दिये जाने पर राजस्व

विभाग उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा करीब १६००० लेखपालों की भर्ती की जानी थी। श्री चरणसिंह ने जिनके पास राजस्व विभाग था आदेश दिये थे कि १८ प्रतिशत स्थान हरिजनों के लिये सुरक्षित रखे जावें। उपयुक्त उम्मीदवारों के अभाव के कारण वास्तव में केवल ५ प्रतिशत ही लिये जा सके। इसके पहले पटवारी की श्रेणी में हरिजनों की संख्या नगण्य थी। भविष्य के लिये श्री चरणसिंह ने नवम्बर १९५४ में एक आदेश जारी किया कि इस उपमार्ग को पूरा करने के लिये रिक्त स्थानों में से ३६ प्रतिशत स्थान हरिजनों के लिये रखे जायें पुनः इस आदेश को दो साल बाद १९५६ में दोहराया गया था।

चकबन्दी अभियान लागू करते समय हजारों सहायक चकबन्दी अधिकारियों (ए. सी. ओ.) की भर्ती होनी थी। जबकि सवर्ण हिन्दू उम्मीदवारों में से कोई भी उम्मीदवार जिसने बी. ए. या बी. एस. सी. परीक्षा द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण नहीं की थी, नहीं लिया गया वहीं पर हरिजनों के तृतीय श्रेणी वाले उम्मीदवारों को भर्ती किया गया।

जबकि स्थापना विभाग द्वारा जारी सामान्य आदेश में सभी सेवाओं में हरिजनों के लिये १८ प्रतिशत स्थानों के आरक्षण का प्रावधान था, श्री चरणसिंह ने कई अनुदेश तकरीबन हर साल जारी किये जिसमें विभाग प्रमुखों से पूछताछ की गयीं, जैसे भूमि सुधार आयोग से पूछा गया, ताकि इस बात का पक्का विश्वास हो जाये कि शासन की नीतियों को कारगर रूप से लागू किया जा रहा है। इस बात का पता लगने पर कि पुराने आदेशों को ईमानदारी से लागू नहीं किया गया है, श्री चरणसिंह ने २८ दिसम्बर १९६३ को एक आदेश जारी किया कि उनके अधीनस्थ तीनों विभागों, कृषि, पशुपालन एवं वन विभाग में चतुर्थ श्रेणी सेवाओं में सभी खाली स्थानों को अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों से ही भरा जाये, जब तक कि उनका भाग १८ प्रतिशत तक नहीं पहुंच जाता है। कुछ महीनों बाद, उत्तर प्रदेश स्थापना विभाग द्वारा केन्द्र सरकार के संकेत पर एक आपत्ति उठाई गई कि इस प्रकार का शत प्रतिशत आरक्षण असंवैधानिक है। बाहरी तौर पर ४५ प्रतिशत से अधिक खाली स्थानों को आरक्षित नहीं किया जा सकता।

हरिजनों द्वारा एक लम्बे अर्से से मांग उठाई जा रही थी कि राज्य सेवा आयोग में कम से कम एक सदस्य अनुसूचित जाति से लिया जाये। जब श्री चरण सिंह अप्रैल १९६७ में उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री बने उन्होंने इस मांग को जल्दी से इस साल के अन्त तक पूरा कर दिया।

भारतीय क्रांति दल के सभी घोषणा पत्रों व नीति निर्देशों में जो श्री चरण

सिंह ने १९६७ में बनाये व सतत् लागू किये (जो बाद में अगस्त १९७४ मे भारतीय लोक दल की आधारशिला बने), में इस बात का उल्लेख था कि भारतीय क्रांति दल हरिजनों एवं अनुसूचित जातियों और जनजातियों को, जिन्हें वर्षो से न्याय नही मिला है, ऊपर उठाने के लिये विशेष ध्यान देगा। इसका दिनांक । दिसम्बर १९७१ का नीति पत्र और आगे बढ़कर कहता है कि जैसे कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के समय में हरिजनों के साथ अति पाश्विकता से बर्ताव हुआ है केवल कानूनी और संवैधानिक प्रावधान से ठीक नहीं किया जा सकता है, इस बात के सकारात्मक कदम उठाने पड़ेगें कि कानून (जिन्हें आवश्यकताओं के अनुरूप और भी कठोर बनाया जाये) हकीकत में कार्यरूप में लागू भी हों।

इसलिये जहां तक उनके आर्थिक सुधार की बात है, एक ओर वह सब अतिरिक्त कृषि भूमि, जो बड़ी भूमियों के सीलिंग लागू करने या ग्रामीणों की आवश्यकता से अधिक अतिरिक्त भूमि या वन भूमि और राज्य की आवश्यकताओं से बची भूमि हरिजनों को आबंटित की जा सकती है दूसरी ओर इस बात को भी नहीं भूलना होगा कि उनकी आर्थिक समस्या (जो दसों बल्कि सैकड़ों, लाखों अन्य भूमिहीनों, बेरोजगारों या अर्ध रोजगार लोगों की भी है) का मूलभूत निराकरण अन्ततः देश के कृषि स्तर साधनों के बढ़ाने पर निर्भर करेगा जो कि इस बात पर निर्भर करता है कि कृषि उत्पादन भी बढ़ाना होगा और हमारा सारा मानसिक आयाम या कि हमारे राष्ट्रीय मनोविज्ञान में पूर्ण परिवर्तन लाना होगा।

तथापि अन्तरिम कदम के रूप में बी. के. डी. प्रस्ताव करती है कि सभी सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के कारखानों में अप्रशिक्षित कार्यो के लिये, उसी तरह परमिट व लाईसेंस कार्यो में भी, शासन के पुरस्कार रूप में, जिनमें किसी तकनीकी जानकारी की आवश्यक न हो, उसके २० प्रतिशत स्थान हमारे समाज के इन दबे कुचले तबकों के लिये आरक्षित रखे जायें।

जैसे कि एक पुराने लेख में लिखा है कि बी. के. डी. जातिप्रथा को खत्म करने के लिये कृत संकल्प है। यह कदम उन्हें समाज में सही दर्जा हासिल करने में सहायता करेगा जिसके वंचित रहने से सदियों से उनके दिलों में जो दूषित भावनाएं घर कर गई हैं उन्हें निकाल देगी। उपरोक्त निजी क्षेत्र में हरिजनों को आरक्षण देने के बाबत यह विचार बाद में १९७६ में उत्तर प्रदेश की कांग्रेस सरकार ने आधार रूप में लिया है। यह निम्नलिखित समाचार साम्रग्री से साफ हो जायेगा जो टाइम्स आफ इण्डिया नई दिल्ली के ४ अक्तूबर, १९७६ के अंक में आयी है।

उत्तर प्रदेश द्वारा हरिजनों के लिये निजी संस्थाओं में नौकरियों के लिये आदेश

लखनऊ, दि० ३ अक्तूबर (समाचार):—उत्तर प्रदेश सरकार ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को निजी क्षेत्र में काम देने हेतु कानून द्वारा फीस निश्चित कर क्रांतिकारी कदम उठाया है।

मुख्यमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी ने कल कहा कि इस बाबत एक अध्यादेश का प्रारूप बनाकर उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिये भेजा जा रहा है। इस अध्यादेश के तहत निजि क्षेत्र के लिये आवश्यक होगा कि वह कुछ प्रतिशत पद अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों के लिये आरक्षित करें।

बी. के. डी. का यह सतत् प्रयत्न रहा है कि ज्यादा से ज्यादा हरिजनों को विधायिका के सदस्यों के रूप में स्थापित किया जाये। हरिजन उम्मीदवारों का अनुपात जो बी. के. डी. के टिकटों पर साधारण निर्वाचन क्षेत्रों से विजयी हुये व अन्य पार्टियों द्वारा खड़े किये गये उम्मीदवारों से कहीं अधिक था। इतना ही नहीं, तीन उदाहरण तो ऐसे हैं जिनमें हरिजन उम्मीदवारों को जिन्हें बी. के. डी. ने साधारण निर्वाचन क्षेत्रों से उत्तर प्रदेश में समर्थन दिया, परन्तु उन्हें निर्वाचक मंडल द्वारा लौटा दिया गया।

इन सारे तथ्यों के बावजूद कांग्रेस द्वारा सन् १९६७ से श्री चरणसिंह के खिलाफ, जब उन्होंने कांग्रेस छोड़ी, यह अनर्गल प्रचार किया जा रहा है कि उनका समुदाय यानि जाट वर्ग उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में अत्यधिक हरिजन विरोधी है और उनसे सवर्ण हिन्दुओं से भी अधिक तिरस्कार पूर्वक बर्ताव किया जाता है और अपमान तथा कष्ट दिया जाता है। इससे बड़ा झूठ और कोई नहीं हो सकता। यदि जाट समुदाय में कुछ दोष हैं तो वह केवल अहं भावना है जो जन्म-जात है और वह ऊंच-नीच के उस तरंग से उस हद तक प्रभावित नहीं है जिस हद तक अन्य समुदायों में जैसे ब्राह्मण, राजपूत, बनिया या खत्रियों में है।

इस प्रकार के जवाब में श्री चरणसिंह ने दो अवसरों पर जैसे अगस्त २ एवं ३, १९७२ में, श्री कमलापति त्रिपाठी के मुख्यमंत्री काल में और मार्च १८, १९७४ में श्री एच. एन. बहुगुणा के मुख्यमंत्री काल में उत्तर प्रदेश की विधान परिषद में यह प्रस्ताव रखा था कि मुख्यमंत्री स्वयं कोई भी दो कांग्रेस विधायकों को जो कि हरिजन समुदाय के हों और जो उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों के रहने वाले हों चुनें और उनके द्वारा पश्चिमी जिलों में (प्राथमिक तौर पर चरणसिंह के खुद के जिले या

निर्वाचन क्षेत्र में जैसा भी मुख्यमंत्री चाहें) और पूर्वी जिलों में भी हरिजनों की सामाजिक दशा का पता लगावें और उनके ब्यौरे को मान लिया जावे। इस प्रस्ताव को मंजूर नहीं किया गया।

हरिजन एवं आदिवासियों के विधायिका एवं सेवाओं में आरक्षण के सिद्धान्त ने उपयोगी उद्देश्य पूरा किया है। नयी राजनैतिक प्रणाली में उन्हें एक सहारा मिला है, और उनकी पारम्परिक समाज से अलग-थलग, नीचे रहने की भावना आज कुछ न कुछ कम हुई है। इसी के साथ-साथ इस प्रयोग की सफलता के चलते हुए शेष बचे हुए समाज में कुछ धक्का सा लगा है। उनका पक्ष यह है कि भर्ती एवं पदोन्नति के नियमों का सिद्धान्त, जरूरत एव खपत की क्षमता के आधार पर न होकर, जाति-संघर्ष के आधार पर है। जैसा कि हिन्दुस्तान टोइम्स नई दिल्ली के सम्पादकीय ८ मार्च, १९८२ में इसी संदर्भ में लिखा है कि हम भविष्य के लिए योजना उसी समय साफ तौर पर बना सकते है जब भूत को अच्छी तरह समझ लें। लोग यह कहते हैं कि वे राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टि को सामने रख कर इस समस्या पर सोचते हैं, लेकिन समस्या की जड़ सांस्कृतिक, नैतिक एव एतिहासिक रही है। उदाहरणार्थ एक हरिजन डाक्टर जो कि सामान्य से कहीं अधिक आय रखता हो क्या किसी संभ्रान्त उच्च जाति की कालोनी में कोई मकान अपने परिवार के लिए किराये पर प्राप्त कर सकता है? नहीं। इसलिए गृह आबटन में आरक्षण आवश्यक है।

शासकीय अनुकम्पा एवं बचाव को प्राप्त करने का आधार आर्थिक हो, जातीय-सम्बन्धता नहीं, एक पूर्ण रूपेण दिखावटी ही है। यह सच है कि एक उच्च हरिजन आदिवासी वर्ग बन गया है जिसने अधिकार प्राप्त कर लिया है और इसी के साथ आरक्षण प्रणाली के बहुत से लाभों को एक कोने में कर लिया है लेकिन आबादी के एक पूरे वर्ग को, एक एतिहासिक हानि के कारण निन्दित किया जाना वैसा ही है जैसे पेड़ के लिए डालियों को छोड़ देना। लेकिन तथ्य कुछ दूसरी ही कथा कहते हैं। पिछले दशक में, प्रथम श्रेणी के लिए आरक्षित ५ प्रतिशत स्थान जो कि मध्य प्रदेश में ०.९३ प्रतिशत और राजस्थान में ८.६ प्रतिशत के बीच है—वे वास्तव में हरिजन एवं आदिवासियों द्वारा द्वितीय श्रेणी में की गयी। वैसी ही भर्ती १२.३% पंजाब में और १.९७% के बीच मध्य प्रदेश में हुई। लेकिन औसतन पूरे भारत के पैमाने पर ५ प्रतिशत अभी भी कम ही है। चतुर्थ श्रेणी में केवल २४ प्रतिशत आरक्षित क्षेत्र ही हरिजन एवं आदिवासियों द्वारा भरे गये।

कानून के सामने बराबरी का सिद्धांत एक प्रशंसनीय सिद्धांत है लेकिन केवल

परम्परागत तौर पर कानून से चिपके रहने से यह मात्र गैर बराबरी का हथियार साबित होता है। संविधान सभा में डा० अम्बेडकर द्वारा आरक्षण व्यवस्था की तर्क संगत परिभाषा दी गई थी—"२६ जनवरी १६५० को हम परस्पर विरोधाभास के जीवन में पदार्पण करेंगे। राजनैतिक तौर पर हमें बराबरी हासिल होगी, लेकिन सामाजिक व आर्थिक जीवन में हमें असमानता हासिल होगी। हमें जल्द से जल्द इस विरोधाभास को हटाना होगा नहीं तो असमानता से पीड़ित लोग राजनैतिक प्रजातंत्र के उस ढांचे को ठुकरा देंगे जिसका निर्माण इस सभा में बड़ी मेहनत से किया है।" वह तर्क आज भी उसी तरह वैध है जिस तरह १६५० में था।

अध्याय : ३

पिछड़ी जातियों की समस्या

हो सकता है चरणसिंह के खिलाफ जातिवादी होने का आरोप लगाते समय विरोधियों के दिमाग में उनके पिछड़ी जातियों के प्रति लगाव का ध्यान रहता हो। इसका कोई ठोस आधार उनके पास नहीं होगा। सही है कि उनकी हर सहानुभूति उन लोगों के साथ थी, और है, जो बिना किसी कारण के प्रशासन में अपनी भागीदारी से वंचित रहे हैं लेकिन साथ ही पिछड़ा जातियों के आरक्षण के सिद्धान्त को आगे बढ़ाने के औचित्य के बारे में भी वे दुविधापूर्ण स्थिति में थे। १९६७ में भारतीय क्रान्ति दल की स्थापना के समय से ही उनके सहयोगियों के ब्राह्मण विरोधी आन्दोलन चलाने की मांग को दृढ़ता से ठुकरा दिया। वे दो धारणाओं में बंट गये थे। एक ओर उनके विचार में आरक्षण नीति हमारे समाज को तोड़ने की कोशिश करती है और पक्षपात रूप से बाधा डालती है, जो कार्यक्षमता की आत्मा है दूसरी ओर शासक जातियां और वर्गों ने जिस तरह जनजीवन और प्रशासन में पिछड़ी जातियों के प्रति भेदभाव पूर्ण रवैया अपना रखा है उससे कम ही उम्मीद की जा सकती है कि वे राष्ट्रीय हित को देखेंगे या सही रूप में निर्देशों का पालन करेंगे। हमारे देश के सार्वजनिक और प्रशासनिक जीवन के इन कटु तथ्यों में धीरे-धीरे उनकी हिचक को खत्म कर पूर्ण रूप से पिछड़ी जातियों के आरक्षण का अनुमोदन करने में उन्हें सहायता की। सार्वजनिक जीवन में और प्रशासन में जाति भावना हमारी इस अभागी जमीन का कड़ुवा सत्य है जिससे प्रधानमंत्री गण और मुख्यमंत्री गण भी अछूते नहीं रहे हैं।

श्री चन्द्रभान गुप्त के मुख्यमंत्री काल में, पिछड़ी जातियों के उम्मीदवारों के लिए ३ या ४ वर्ष, उम्र की छूट की सुविधा, जो कि राज्य सरकार ने प० गोविंद बल्लभ पन्त के जमाने में उपलब्ध कराई थी, का विरोध हुआ और श्री चरणसिंह, जो उस समय गृह मन्त्री थे, के गृह विभाग से इस सुविधा को बन्द करने के लिए आग्रह किया गया। चरणसिंह ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। लेकिन श्री गुप्ता ने जब मार्च १९६२ में गृह मत्रालय चरणसिंह से छीन लिया तो इस सुविधा को बन्द कर दिया। हकीकत में श्री गुप्ता हमारे समाज के इस अभागे तबके को किसी भी प्रकार की सुविधा देने के खिलाफ थे। उम्र में दी गयी रियायत को दूसरे विभागों में भी देने सम्बन्धी उपरोक्त सुविधा सम्बन्धी एक गैर सरकारी प्रस्ताव जब एक सदस्य द्वारा लाया गया और बिल पेश हुआ तो श्री गुप्त ने तय किया कि उन सदस्य महोदय से इसे वापिस लेने के लिए कहा जाये नहीं तो सरकार की ओर से बिल का विरोध किया जाये।

चरणसिंह ने उन्हें इस सम्बन्ध में ६ अगस्त, १९६१ को एक टिप्पणी लिख कर पिछड़ी जातियों के साथ हुए अन्याय का ध्यान दिलाया। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। उक्त टिप्पणी नीचे दी जा रही है।

मुख्य मंत्री जी,

मैं कुछ तथ्यों को आपके ध्यान में लाना चाहता हूं।

१. मुस्लिम और दूसरे धर्मों के अल्पसंख्यकों की संख्या हमारे राज्य की आबादी का १४.५ प्रतिशत से ज्यादा नहीं होती है। ८५.५ प्रतिशत में से जो कि हिन्दू हैं, अनुसूचित जातियों का दावा १८.५ प्रतिशत का है। बचे हुए ६७ प्रतिशत में सवर्ण या उच्च वर्ग हिन्दुओं का प्रतिशत २१ से ज्यादा नहीं होता।

हिन्दुओं में, ४६ प्रतिशत पिछड़ी जाति के लोग हैं, तथा मेरे आकलन के अनुसार १४.५ प्रतिशत मुस्लिम तथा दूसरे धर्मों के अल्प-संख्यकों में भी पिछड़ी जाति के लोग आधे से अधिक हैं। अतः हमारी कुल आबादी में (४६+७)=५३ प्रतिशत या कम से कम, किसी भी हालत में आधे से अधिक पिछड़ी जातियों के लोग हैं।

२. शासन द्वारा १९५५ में दिये गए जवाब के अनुसार १९४६-४७ में कुल ३,२५० के करीब राजपत्रित अधिकारियों में से केवल ३५ पिछड़ी जातियों के थे। **१९५४-५५ में राजपत्रित अधिकारियों की संख्या २,००० बढ़ गई यानि कुल ५,२५० हो गई, जबकि पिछड़ी जातियों के राजपत्रित अधिकारियों की संख्या ३५ से घटकर २५ रह गई।**

३. कांग्रेस पार्टी ने विधान मंडल में दो तिहाई सीटें पाईं और विरोधी पार्टियों ने एक तिहाई सीटें पाईं। लेकिन दो तिहाई में केवल २२ सदस्य ही पिछड़ी जातियों से थे और एक तिहाई में से जो कि विरोधी थे, ३३ सदस्य पिछड़ी जातियों के थे। अतः आंकड़ों में कहा जाए तो विरोधी पार्टियों ने कांग्रेस की तुलना में पिछड़ी जातियों के मतों को ३ और १ के अनुपात में हासिल किया है।

४. दक्षिण के सभी राज्यों ने उनकी सेवाओं में भर्ती के लिये पिछड़ी जातियों के लिए कुछ प्रतिशत स्थान आरक्षित किये हैं। पिछड़ा वर्ग आयोग ने भी इस सम्बन्ध में सिफारिश की है।

५. जैसा कि गृह सचिव की टिप्पणी कहती है कि पिछड़ी जातियों की शासकीय सेवा में दिया जाने वाला कोई भी आरक्षण पूर्णतः संविधान सम्मत होगा।

६. पिछड़ी जातियों ने एक लम्बे अर्से से इस सुविधा यानि कि गृह विभाग द्वारा दी जाने वाली उम्र की छूट की सुविधा का फायदा उठाया है। यह सुविधा सही में वापस नहीं ली जा सकी है चूंकि मन्त्रीमण्डल द्वारा दि० २५ अप्रैल, १९६१ को लिया गया निर्णय केवल यह कहता है कि प्रस्ताव का विरोध किया जायेगा यानि कि गृह विभाग द्वारा दी जाने वाली छूट, सुविधा अन्य विभागों द्वारा नहीं दी जाएगी।

७. मैंने जैसे तथ्य दिखे उनको बिना किसी तरह रंगे कह दिया। मैं २५ अप्रैल को मंत्री मंडल की बैठक में उपस्थित नहीं था अतः मुझे इन तथ्यों को अपने साथियों के सामने लाने का मौका नहीं मिला।

८. मैं कतई सेवाओं में या विधान मंडल में आरक्षण का समर्थक नहीं हूं। साथ ही मैं समझता हूं कि शासन द्वारा प्रस्ताव का विरोध राजनैतिक रूप से अनुचित होगा। मैं इस टीप को जल्दी में लिख रहा हूं अतः सकारात्मक प्रस्ताव नहीं दे रहा बल्कि मैंने अभी तक कोई सोचा भी नहीं है।

हस्ता०/
चरणसिंह
९-८-१९६१.

गृह मन्त्री,

शायद गृहमंत्री को इस मामले में केन्द्र सरकार के रवैये की जानकारी नहीं है। भारत सरकार ने सतत् पिछड़ी जातियों की इस मांग का विरोध किया है। अतः हम इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं कर सकते। अतः प्रस्ताव वापस लेने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

हस्ता/- च०भा० गुप्त
९-८-१९६१.

सन् १९७९ से, जनता सरकार ने द्वितीय पिछड़ी जाति आयोग नियुक्त किया, जो कि भारत में, पिछड़ी जातियों की सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति का

अध्ययन कर सके। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट सन् १९८० में दी। भारत की सरकार में पिछड़ी जातियों द्वारा प्रतिनिधित्व के विषय में, इस आयोग की रिपोर्ट में निम्न तथ्य उपस्थित किये गये हैं।

सभी स्तर की पिछड़ी जातियों का भारत सरकार में प्रतिनिधित्व के विषय पर, एक प्रश्न सूची सभी मंत्रियों तथा विभागों आदि को, १९ मार्च, १९७९ को दी गई। जैसा कि अन्य पिछड़ी जातियों की, न तो कोई सूची केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाई गई थी और न ही उनके विषय में अन्य जानकारियां ही एकत्रित की गई थीं, अतः अन्य पिछड़ी जातियों (हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही) को पहचानने की एक अव्यवस्थित सी संदर्भ कसौटी भी तैयार की गई। इस संदर्भ-कसौटी की जानकारी पैरा-४, संलग्नक-७, पुस्तक-II में दी गई है।

उक्त प्रश्न-सूची के उत्तर, ३० केन्द्रीय मंत्रियों/विभागों ३१ सहायक विभागों तथा १४ मन्त्रियों द्वारा प्रशासित पब्लिक सेक्टर के विभिन्न विभागों, ने दिये। इन सभी स्रोतों से जानकारियों का विस्तृत ब्यौरा संलग्नक-८, पुस्तक-II में दिया गया है। निम्न तालिका से इस विषय का एक संक्षिप्त ब्यौरा प्राप्त किया जा सकता है—

रोजगारों का स्तर	रोजगारों की कुल संख्या	अनु० जातियों अनु० जन जातियों का प्रतिशत	अन्य पिछड़ी जातियों का प्रतिशत
प्रथम स्तर	१,७४,०४३	५.६८	४.६९
द्वितीय स्तर	६,१२,७८६	१८.१८	१०.६३
तृतीय तथा चतुर्थ स्तर	४,८४,६४६	२४.४०	२४.४०
सभी स्तर	१५,७१,४७५	१८.७१	१२.५५

उक्त तालिका से दो बातें स्पष्ट हो जाती हैं—पहली तो यह कि अनु० जातियों/अनु० जन जातियों में रोजगारों का प्रतिशत अन्य पिछड़ी जातियों में रोजगारों के प्रतिशत से अधिक है। जैसा कि स्पष्ट है कि अनु० जातियों/अनु० जन जातियों में रोजगारों की संख्या—१८.१७% है जबकि कुल आबादी, देश में २२.५% है और अन्य पिछड़ी जातियों में यही संख्या १२.५५% है जबकि उनकी कुल आबादी देश में ५२% है।

दूसरी बात यह कि अनु० जातियों/अनु० जन जातियों तथा अन्य पिछड़ी जातियों में प्रथम स्तर के रोजगारों का प्रतिशत, देश में अन्य रोजगारों के प्रतिशत की तुलना में बहुत कम है। जैसा कि उक्त तालिका से स्पष्ट है कि अनु० जातियों/अनु० जन जातियों के प्रथम स्तर के रोजगारों की संख्या ५.६८% है तथा अन्य पिछड़ी जातियों में यही संख्या केवल ४.६९% है। दूसरे शब्दों में, अन्य पिछड़ी जातियों के रोजगारों का प्रतिशत भारत सरकार की प्रथम स्तर की नौकरियों में, अपनी कुछ आबादी के दसवें भाग से भी कम है।

उत्तर प्रदेश विधान मंडल में सरकार द्वारा दिए गये उत्तर के अनुसार पिछड़ी जातियों के मुकाबले ऊंची जातियों के राजपत्रित अधिकारियों की संख्या का अनुपातिक प्रतिशत १९४६, १९५५ और १९६० में क्रमश: ०.८०, ०.४७, ०.७० था। इसका मतलब है कि राजनैतिक आजादी के बढ़ने के साथ न केवल पिछड़ी जातियों की बेहतरी के लिए कुछ किया जा सका बल्कि जहां तक देश के सबसे बड़े राज्य में शासकीय सेवाओं में प्रतिनिधित्व का सवाल है संविधान में इस सम्बन्धी प्रावधान होने के बावजूद उनकी स्थिति बिगड़ी ही है।

श्री चरणसिंह ने दूसरा कोई रास्ता न होने से अपनी इच्छा के विपरीत १९७१ में पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण पर सहमति दी। श्री चरणसिंह विरचित १९६७ में गठित भारतीय क्रान्ति दल नामक राजनैतिक पार्टी द्वारा प्रकाशित "भारतीय क्रान्ति दल के उद्देश्य एवं नीतियां" नामक पुस्तिका जो कि १९७४ में उत्तर प्रदेश के विधान मंडल के आम चुनाव में बी.के.डी. के चुनाव घोषणा पत्र के रूप में आगे आयी, में निम्न वाक्यांश थे।

यद्यपि, अनुसूचित जन जातियों एवं अनुसूचित जातियों को छोड़कर दोनों हिन्दू और मुसलमान जातियाँ, जो कि सामाजिक व शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए हैं हमारी जनता का करीब आधे से अधिक हिस्सा बनाते हैं, तथापि उनकी प्रशासनिक या राजनैतिक नक्शे पर जगह नगण्य है। इस तरह की कार्यवाही सामाजिक और

राजनैतिक तनाव पैदा करती है। भला हो उन लोगों की देश भक्ति की भावना का जो आज सत्ता से घिरे हैं। इसमें अभी कोई कमी नहीं आई है और इस अवस्था में ब्रिटिश शासन काल से भी खराब स्थिति हो गई है। अतः जहां बी.के.डी. किसी भी तरह के आरक्षण को बुरी नीति मानती थी अन्ततः इस निर्णय पर पहुंची है कि इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है कि शासकीय सेवाओं का एक करीब २५ प्रतिशत हिस्सा उन नवयुवकों के लिए आरक्षित किया जाये जो पिछड़ी जातियां से हैं। संविधान की धारा ३४० के अन्तर्गत खुद केन्द्र सरकार द्वारा काका कालेलकर की अध्यक्षता में १९५४ में गठित पिछड़ा वर्ग आयोग ने भी इसकी पुष्टि की है।

पाठकगण यहां ध्यान दें हालांकि आयोग ने ए श्रेणी में २५ प्रतिशत बी श्रेणी में ३३.५ प्रतिशत और सी तथा डी श्रेणी में ४० प्रतिशत आरक्षण की सिफारिश की थी। श्री चरणसिंह ने सभी सेवाओं में लिए २५ प्रतिशत पर इसे सीमित कर दिया।

श्री चरणसिंह अपने स्वर से हमारी जनता के बहुमत के हक में की गई इस गलती में सभी साथियों सहित शामिल हैं। राष्ट्र पिता महात्मा गांधी ने बहुत पहले स्वतन्त्रता पूर्व १२ जून, १९४७ को दिल्ली में प्रार्थना सभा में अपने इस बोध को समझाया था। "भविष्य में भी देश की बहुसंख्यक आबादी प्रशासन से दूर की जा रही होगी।"

आगे यद्यपि "नेहरू खुद अपनी जाति के प्रति कमजोरी से ऊपर नहीं उठ सके, उन्होंने भी एक चेतावनी के स्वर में आम सभा में निम्न शब्द कहे "कि देश के प्रशासन में कुछ इने-गिने वर्गों का कब्जा है और यदि मामला इसी स्थिति में बे-रोक-टोक चलता रहा तो इसका नतीजा भयंकर होगा।"

यह दुर्भाग्य की बात है कि राष्ट्र पिता द्वारा और उनके उत्तराधिकारी द्वारा दी गई चेतावनी हवा हो गई फलस्वरूप सदियों से पुरानी जमीन में पैदा करने वालों का शोषण करने की परम्परा जारी है।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है और उनके लिये स्पष्ट है कि जो देखें कि पूरे देश में प्रशासन तथा अन्य सत्ता पर दो चार जातियों का ही एकाधिकार है। बिहार में एक या दो विभाग तो ऐसे हैं जिसमें ८५ प्रतिशत से अधिक शासकीय सेवा में केवल एक ही जाति के व्यक्ति हैं। सभी ईमानदार लोग इस बात को मानेंगे कि यह अन्याय है और इससे जो लोग प्रभावित होते हैं उन्हें पीड़ा पहुंचती

है। लेखक किसी भी रूप में इन भाग्यशाली समुदाय के अधिकारियों या कर्मचारियों को अथवा जिन्होंने उन्हें भर्ती किया है, कतई दोष देना नहीं चाहता। सवाल केवल इतना है कि क्या दूसरे जातियों के नव युवक बहिष्कृत या कि द्वितीय श्रेणी के नागरिक माने जायेंगे।

ऊंची जातियों की यह दलील कि पिछड़ी जातियों के पक्ष में आर्थिक आधार के बजाय जन्म के आधार पर किया गया आरक्षण मौजूदा जाति व्यवस्था को और मजबूत बनायेगा जो कि निश्चित रूप से बुराई है और पूरी तरह यह मंशा इस बात का मुंहतोड़ जवाब देती है कि चिकित्सक को रोगी को ठीक करने से पहले अपने आप को ठीक करना चाहिये। उदाहरण के लिये पिछड़ी जातियां यह जानना चाहेंगी कि क्या सदियों से आज तक हमारे समाज में जो असमानता व्याप्त है वह विशेष जाति मे जन्म के आधार पर है कि आर्थिक आधार पर। आगे क्या यह सच नहीं है कि आज भी एक अच्छा खासा हरिजन सामान्यतः हमारे समाज में वह सम्मान या बराबरी का दर्जा नहीं पाता जो कि एक गरीब ब्राह्मण।

जैसा कि मैसूर उच्च न्यायालय ने डी.जी. विश्वनाथ और मुख्यमंत्री मैसूर ने राज्य के एक मामले में (ए.आई.आर. १९६४ मैसूर, १३२ बी.आई.सी. ३५) निर्णय दिया। बुराई का घेरा भी तोड़ा जा सकता है जब मौजूदा समाज व्यवस्था से लाभान्वित देशों के लोगों को अपने ही साम्प्रदायिक सोच को तोड़ना होगा।"

आगे यदि श्री चरणसिंह पिछड़ी जातियों के युवकों के लिए उन राज्यों में शासकीय सेवाओं में, जिनमें इससे वे वंचित हैं, भागीदारी की वकालत करते हैं तो वे केवल कांग्रेसी नेताओं द्वारा देश में श्री जवाहरलाल नेहरू के प्रबन्ध काल में केरल, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश की राज्य सेवाओं के सम्बन्ध में अपनाये गये पद-चिन्हों पर ही चल रहे हैं। यह कैसे हो सकता है कि जो बात उनके समय नेक थी आज पाप हो गई।

शासकों और शीर्षकों की निगाहों में यह पाप है चूंकि आज, जो सभी तरह की सत्ता का उपभोग वे कर रहे हैं, उस एकाधिकार पर चोट पहुंचेगी। तर्क, न्याय, गरीबों के लिए पीड़ा और धर्म के सिद्धान्त आदि उस व्यक्ति के दिल पर कोई असर नहीं डालते जहां उनका स्वार्थ आशंका में हो। और पिछड़ी जातियां (अनुसूचित एवं अन्य) द्वारा राज्य और केन्द्र स्तर पर भी राजनैतिक सत्ता और शासकीय सत्ताओं में उचित भागीदारी का दावा यकीनन उन्हे पीड़ा पहुचाता है या हितों को चोट पहुचाता है जिन्होंने दावेदारों के सही अधिकारों को छीना है। जब किसी व्यक्ति या समुदाय के स्वार्थ की बात हो, कोई नियत्रण बाँध नहीं सकता।

देश का हिन्दू राजनैतिक नेतृत्व हमेशा से जात के सवाल पर डांवाडोल रहा है। जब तक इसे जड़ मूल से खत्म नहीं किया जाता तब तक हिन्दुओं का या राष्ट्र का कोई उद्धार नहीं हो सकता, और अन्याय होता रहेगा तथा सामाजिक अशांति देश को छल लेगी। जात व्यक्तियों का वह समुदाय है जो आपस में विवाह करते है। अतः इस समस्या का मूल विवाह है। जब तक मूल पे चोट नहीं की जाती समस्या का हल नहीं होगा। हम अंतर्जातीय विवाह सबके लिए कानूनी बधन न भी बनायें उनके लिए जो देश सेवा के रूप में राजपत्रित पदों को चुनते है या कानून के निर्माता बनते हैं इस बंधन को लागू करें। नौजवान पढ़े-लिखे तबके में इस बारे में तकरीबन कोई बाधा नहीं है। केवल आवश्यक राजनैतिक इच्छा की आवश्यकता है ताकि इसे विधान में लाया जा सके।

लेखक को पूरा विश्वास है कि कोई सूत्र बनाया जा सकता है—

(अ) जो न केवल हमारे समाज के ढांचे को तोड़ेगा बल्कि उसे और मजबूत और एकजुट बनायेगा।

(ब) जो हमारी प्रशासनिक क्षमता को क्षति नहीं पहुंचायेगा और फिर भी बीती सदियों से चली आ रही अनुसूचित जातियों व जनजातियों के सांस्कृतिक गतिरोध को मिटाने की जगह देगा। एक ऐसा सूत्र जो उन लोगों के बेटे बेटियों के लिये भी अवसर प्रदान करने में सहायता करेगा जो गरीबी रेखा के नीचे रहते हैं। (देश में कुल आबादी के आधे से अधिक हैं) और प्रशासनिक सत्ता के एकाधिकार को जो कि आज हमारी जनता के केवल सातवें भाग के हाथों में है, नियंत्रित करेगा। इस तरह समाज को बढ़ावा देने में सहायता करेगा जिसमें अभाव, घुटन और फलस्वरूप कड़वाहट जो कि आज अधिकतर लोगों में व्याप्त है की जगह सचाइ और कार्यक्षमता व्याप्त होगी।

जब तक ऐसा तरीका निकले, मौजूदा आरक्षण व्यवस्था को जारी रखना पड़ेगा।

समाप्त

'Who Is A Casteist ? An Analysis'

The above book is now on sale.
The 65 page book is priced
at Rs. 2.50 (Registered Book Post Rs. 3.20 extra)

Publication Division

The Kisan Trust, Delhi

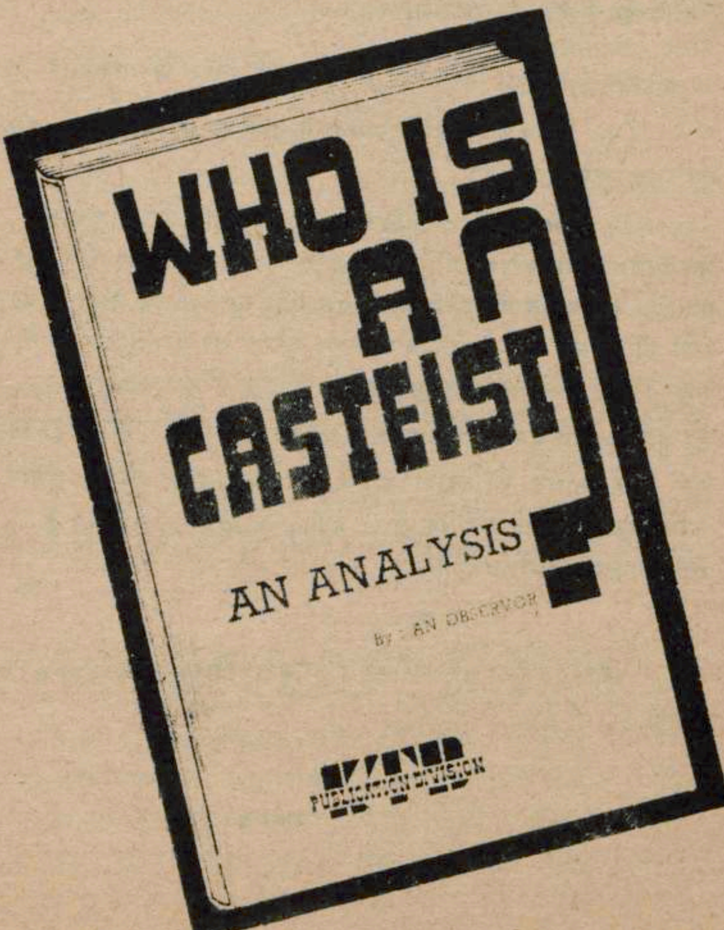

किसान ट्रस्ट के प्रकाशन

1. भारत का आर्थिक पतन: कारण एवं समाधान
लेखक:— (चौधरी चरण सिंह)
मूल्य: 1.00

2. जाति वादी कौन: एक विश्लेषण
लेखक:— एक द्रष्टा
मूल्य: 2 रुपये

3. सरकारी सेवाओं में किसान-संतान के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण क्यों!
लेखक: चौधरी चरण सिंह
नि: शुल्क

4. WHO IS A CASTEIST : AN ANALYSIS
BY :—AN OBSERVOR
Price :—2.00

5. HOW WE CONQUERED INDIA
BY :—Sir J.R. Seely
Free

(डाक खर्च अतिरिक्त)

सम्पर्क करें:—
प्रकाशन विभाग
दि किसान ट्रस्ट दिल्ली
12, तुगलक रोड़, नई दिल्ली-110011

असली भारत

(हिन्दी साप्ताहिक)

आजीवन सदस्य 500.00
वार्षिक सदस्य 40.00
अर्धवार्षिक सदस्य 20.00

सम्पर्क करें:—
प्रसार व्यवस्थापक
असली भारत (हिन्दी साप्ताहिक)
12, तुगलक रोड़, नई दिल्ली-110011

शाखा कार्यालय: "असली भारत"

6 ए, राजभवन कालोनी, लाल बहादुर शास्त्री मार्ग, लखनऊ (उ० प्र०)
6/2, आर. ब्लाक, न्यू स्पेशल टाइप, पटना-1 (बिहार)
बी-10, एम. एल. ए. क्वाटर्स, जयपुर (राजस्थान)
दुर्गा कालोनी, सांनीपत स्टैंड, रोहतक (हरियाणा)